ग्यारह पत्ते

समाज के यथार्थ को रेखांकित
करने वाली तीखी कहानियाँ

मस्तराम कपूर

निधि प्रकाशन
1590, मदरसा रोड, कश्मीरी गेट, दिल्ली-6

अपनी बात

अपने प्रथम कहानी सग्रह 'एक ग्रदद ग्रौरत' के प्रकाशन के समय भूमिका मे मुझे अपन लेखन के सम्बन्ध मे कुछ स्पष्टीकरण देने पडे थे, इसलिए कि उस समय जिस तरह का लेखन ग्राम तौर पर हो रहा था, उसमे मैं अपने को 'मिसफिट' महसूस करता था। लगभग बारह साल के बाद फिर मुझे अपनी कैफियत दने की जरूरत महसूस होती है। इस अवधि मे मेरे चार उपन्यास और कुछ बाल साहित्य की रचनाए छप चुकी है। इस सारे लेखन के दौरान मैं अपनी परिस्थितियो की अनदेखी करने का साहस मन मे नही जुटा सका, जो उत्तरोत्तर खतरनाक बनती गई। साथ ही मैं 'व्यक्ति के स्वय परिस्थिति बन जाने के' दर्शन को अपनाकर, सामाजिक परिस्थितियो से विमुख, व्यक्ति मन की रोमानी वादियो म विचरण नही कर सका।

लगभग तीस वष का लेखकीय जीवन बिताने के बाद अब शायद मुझे यह कहने का हक मिलता है कि मैं क्यो लिखता हू। मेरे लिए लेखन जिन्दगी का सघष है, रोजी-रोटी का सघष नही वैचारिक सघष, जो परिस्थितियो से टकराव के कारण उत्पन्न होता है। मेरा सौन्दयबोध, यदि उसे सौन्दयबोध कहा जा सकता हो, इसी सघष की उपज है। मुझे उस सौन्दय की तलाश नही है जिसमे आदमी अपनी सुधबुध भूलकर खो जाता है, मैं उस सौन्दय को ढूढता हू जो जीव के परिस्थितिया पर हावी होने की सफल या असफल कोशिशो का परिणाम है। मैं उस केंचुए की दृष्टि नही अपना सकता जो बाह्य परिस्थितियो से खतरा महसूस करके कुडली मारकर अपने भीतर सिमट जाता है। मुझे च्यूटी की दृष्टि प्रिय है जो बाधक परिस्थितियो पर यथाशक्ति वार करती है। मेरी रुचि ऐसी रचना करने म

नहीं है जो इस देश के पतीस करोड भूखा नगा से दृष्टि हटाकर, अलौकिक सुख या स्वर्गिक आनन्द की सृष्टि करके सार्वकालिक और सार्वभौम बनने का दावा कर। मेरे लिए यही सन्तोष की बात होगी यदि मेरी रचना मुझे और मेरे पाठकों को मन और परिस्थितियों के उस द्वन्द्व के बीच ला खडा कर जिससे हम सब जाने अनजाने गुजर रहे हैं, ताकि हम उन परिस्थितियों से भागने के बजाय उन्हें बदलने में प्रवृत्त हो सकें। मेरा उन लोगों से कोई झगड़ा नहीं है जो परिस्थितियों से समझौता करके या उनसे भागकर रोमानी दुनिया की रसात्मकता और रमणीयता की तरफ अपने को और अपने पाठकों को ले जाते हैं। इस तरह के सृजन की अपनी उपयोगिता है, सदियों से रही है। दुनिया का अधिकांश सृजन इस कोटि का है और आगे भी रहेगा—और यह भी सभव है कि कला की ऊंचाइयों को छूने वाली रचनाएं अधिकतर इसी तरह की रही हों। लेकिन इस समय जबकि जीवन की मूल क्रियाओं—सवेदन, चिन्तन और सृजन को हर प्रकार से कुंठित करने के लिए राजनैतिक और भौतिक शक्तियां पूरी तैयारी के साथ जुटी हैं, मुझे रचना के सामान्य धर्म को निभाना ही रुचिकर लगता है और वह यह कि रचना आदमी को जिन्दगी का अपहरण करनेवाली परिस्थितियों को बदलने के लिए बेचैन करे।

एक बात शिल्प के बारे में कहना चाहता हूं, जिसका साहित्य में बहुत ढोल पीटा गया है और जिसकी बिना पर यहां पूर्ववर्ती साहित्यकारों को नकारने की साजिश होती रही है। इतिहास बताता है कि शिल्प की प्रधानता कला में तब हुई जब समाज में निठल्लापन आया। कथ्य के अभाव में कलाकार शिल्प पर जीता है, यह मूल्यों के प्रति कलाकार की सवेदनशून्यता का द्योतक है।

प्रस्तुत कहानियां मेरे इन विचारों को कहां तक वहन करेंगी यह तो पाठक ही तय करेंगे।

—मस्तराम कपूर

दिनांक 5 फरवरी 1981
79-बी पाकेट 3 डी डा० ए० कालोनी
त्रिलोकपुरी दिल्ली-92

क्रम

1 ग्यारह पत्ते / 9
2 मा फलेषु कदाचन / 16
3 बदली का आदेश / 23
4 लच / 30
5 उद्घाटन / 42
6 खुमारी / 51
7 अजीब लोग / 60
8 दीक्षा / 68
9 अविरोध / 88
10 लिखित / 95
11 टोपियों की गड़बड़ी / 102

ग्यारह पत्ते

उसके हाथ म ग्यारह पत्ते थ। चिकने, करार । एक के ऊपर एक कुल ग्यारह पत्तो की तह को उगलिया म दबाए वह कुछ सोच रहा था और उसके चेहरे पर नजर गडाए थी पाच जोडी आखें।

उसन धीरे धीरे गिनना शुरू किया—एक, दो, तीन, चार, पाच, छ, सात। सात पत्ते जब उसने पत्नी की तरफ बढाए तो पत्नी मे जरा भी हरकत नही हुई। उसन न हाथ आगे बढाया, न अपनी जगह से हिली। किशोर ने अपना हाथ थोडा और आगे किया और कहा, "पकडो तो।

"कितने हैं ?" लता ने बिना कोई उत्साह दिखाए पूछा।

जितने पिछली बार थे, उतन ही है।"

' इन सात पत्ता के साथ मैं कसे क्या करूगी ?"

"वो भी तो लोग है जि ह इतने भी नही मिलत।'

"आप अपने पास ही रखो। खुद ही ले आया करो सब कुछ।'

किशार की इच्छा हुई कि हाथ के सभी नोटो को पत्नी के सिर पर द मारे। लेकिन फिर सोचा इसमे इस बेचारी का क्या दोष ? किसी का गुस्सा किसी के सिर पर उतारना तो बहुत पागनपन है। और फिर चारा बच्च सामने खडे थे। थोडा मुस्कराकर उसा कहा—

' अभी तो रखो जरूरत पडेगी ता और कुछ बदोबस्त करेंगे।"

लता ने सात नोट ल लिए और उ ह बेरहमी स तीन तहो मे मोडकर तकिये के नीच रग दिया।

किशार ने अब तीन पत्ते चारा बच्चा की ओर बढा दिए।

' कितन हैं ? ' एक न पूछा।

' जिनन पिछली बार थ।" किशोर सवाद को दुहरात हुए मुस्करा

पड़ा।

किस हिसाब से ? '

चालीस जेब खर्च, पन्द्रह बस का पास और बीस कालेज की फीस। हर एक के हिस्से में पचहत्तर रुपये।"

' मुझे इस महीने सूट का कपड़ा लेना है।' बड़ी लड़की ने कहा।

' और मुझे चप्पल लेनी है।" दूसरी बोली।

' मेरे पास तो एक भी पैंट ढंग की नहीं है।" लड़के ने जिरह की।

और मुझे तीन किताबें लेनी हैं। कम से कम साठ तो लगेंगे।' दूसरे लड़के ने अपनी माग रखी।

किशोर ने बच्चों की ओर देखा, फिर हाथ में आखिरी पत्ते पर उंगली फिराकर टटोलने लगा। शायद एक की जगह दो पत्ते निकल आए। आखिरी पत्ते को बच्चों की तरफ बढ़ाकर बोला, ' यह लो, इसमें जितनी जिसकी जरूरत पूरी होती है कर लो।'

बच्चों ने एक दूसरे की तरफ देखा, फिर मां की तरफ देखा और अन्त में पिता के चेहरे पर नजर डाली। फिर बड़ी लड़की बोली, "मैं सूट अगले महीने बना लूंगी।"

' चप्पल भी एक महीना चल ही जाएगी। दूसरी बोली। लड़के ने निर्णय किया, ' मैं अगले महीने सस्ते बाइस रुपये की जीन ले लूंगा।

दूसरे लड़के ने कहा, "इस महीने लायब्रेरी से काम चला लूंगा, अगले महीने देखा जाएगा।

मामला रफा-दफा हुआ। बच्चे अपने कमरे में चले गए और रेडियो को पूरे वाल्यूम पर चलाकर अपना अपना काम करने लगे। लता रसोई घर में जाकर अपने काम में लग गई। किशोर आखिरी पत्ते को हाथ में लेकर अपना उदास तकिये के सहारे बैठ गया।

पिछला बार [illegible] लाजिता और पुष्पा के लिए स्वेटर की बजाय उधार समिति से तीन हजार का कर्ज लिया था। उसकी अभी तीन किस्तें बाकी हैं। [illegible] [illegible] लिए चार हजार का [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] करता है [illegible] [illegible] [illegible] दूसरे [illegible]

ही पडेगा। एक साल से पहले वह भी नही हो सकता। एक एल०टी०सी० बेकार गया अब दूसरा भी बेकार जाता दिखाई देता है। रेल किराया तो दफ्तर स मिल जाएगा लेकिन बाकी का खच कैसे जुटेगा ? उस याद आया कि दो महीनो का बिजली पानी का बिल दफ्तर मे मेज की दराज म पडा है। कल उसकी पमेंट भी करनी है। और रेडियो, टेलीविजन का लाइसेंस भी रिन्यू कराना है। आठ रुपय पैनल्टी चढ चुकी है। किसी दिन कोई चैक करन वाला आ गया तो चालान कर देगा।

रसोईघर से चाय के प्याले के टूटने की आवाज आई। किशोर लाइसेंस की बात भूलकर चाय के प्यालो की बात सोचन लगा—पिछले महीन छ प्याले खरीदे थे। अब तीन रह गए। घर मे चार मेहमान आ जाए तो नाक कट जाएगी। प्यालो का बदोबस्त तो आज ही करना पडेगा।

उसने खाट के पास रखी छोटी सी मेज की तरफ घूमकर देखा। कलमदान के नीचे अखबार वाले का बिल रखा हुआ था। उठाकर देखा तो जैसे चौंक पडा सोलह रुपये चालीस पैसे ! यह कैसे ? बारह रुपय से एकदम बढकर सोलह रुपय हो गए ? सोचने पर याद आया कि अखबार वालो ने पिछले महीने स कीमतें पाच पैस बढा दी हैं।

कल से अखबार बन्द, उसने मन ही मन निश्चय किया, नेताओ के झूठ, एडीटरो की चापलूसी और छुट भैये अफसरो के तुगलकी फरमान पढ कर दिमाग भी खराब करो और पैसे भी ज्यादा दो। एकदम बेवकूफी है। पता नही इस देश क लोगो को क्या हो गया है ! अगर इस देश के लोग अखबार पढना बद कर दें तो करोडो रुपयो की बचत होगी। लोगो के दिमाग दूषित होन से बचेंगे और अपनी समस्याओ पर सोचन के लिए उनके पास ज्यादा समय मिलेगा।

दरवाजे की घटी की आवाज ने कानो में झनझनाहट पैदा कर दी। लगता था कोई आदमी मौत के मुह चला जा रहा है और आखिरी मदद के लिए छटपटा रहा है। बच्चे न दौडकर दरवाजा खोला। बाहर स आवाज आई, "बीबीजी, पाच रुपय।

रसोईघर म स्टेनलेस स्टील का एक गिलास छूटकर फश पर गिर

पडा। जली भुनी लता की आवाज सुनाई दी, 'दो महीने पहले तो पैसे बढाए थे। जमादारनी बोली, "बीबीजी, दो महीने से कीमतें कहा से कहा पहुच गई। चीनी सात रुपये हो गई।"

लेकिन प्याज तो सस्ता है।'

प्याज कितना लगता है घर मे ? एक प्याज दिन मे काफी होता है। लेकिन चीनी तो

चीनी क्या हमने महगी की ?'

पाच रुपये से कम दाल भी तो नही मिलती। साबुन, तेल "

अच्छा अच्छा चपर चपर मत कर, महगाई तुम्हारे लिए ही है। हमारे लिए क्या महगाई नही है ?"

"बीबीजी, आप बडे लोग हैं। साहिब लोगो को क्या फर्क पडता है।"

'हा हा, साहब लोगो के घर रुपयो की टकसाल जो लगी है।"

बडी लडकी ने आकर हस्तक्षेप किया, बोली—

पाच तो दूर, इस महीने साढे चार भी नही मिलेंगे।"

'क्यो ? जमादारनी ने आखें तरेरकर पूछा।

'हफ्ते मे कितने दिन आती हो ? मुश्किल से दो दिन। उसी हिसाब मे तुम्हे सिर्फ दो रुपये मिलेंगे।'

दो रुपये अपने पास रखो। मैं तो पूरी तनख्वाह लूगी। जब ऊपर पानी ही नही आता तो आकर करूगी क्या ? सफाई किससे करूगी ?

किशोर मन ही मन खीज रहा था। यह जमादारनी तो सिर खा जाती है। इतना बोलती है कि दिमाग भन्नाने लगता है। भूचाल की तरह आती है। अन्दर बैठे-बैठे आवाज दी—

अरे यह क्या पालियामेंट बना रखा है घर को ?'

बाहर की बहस बद हो गई। जमादारनी ने पैसे ले लिए। जाते जाते बोल गई 'इस महीने के लिए साढे चार। अगले महीने पूरे पाच लूगी।'

किशोर जानता था कि अठन्नी रुपये को लेकर यह चख चख घर में कपडे प्रेस करने वाले धोबी और डेरी से दूध लाने वाले लडके से भी करनी पडेगी। लता के इस चिडचिडेपन पर उसे कभी कभी बडी खीज होती है। इसीलिए शाम को लता के साथ टहलने निकलना भी उसे अच्छा नही

लगता है क्योंकि रास्ते में सब्जी मार्केट से गुजरते समय वह जरूर कुछ खरीदती है और इस काम में सब्जीवाली के साथ कुछ न कुछ कहा सुनी जरूर होती है। इन जरा जरा-सी बातों के लिए उससे बहस करने का मतलब है यह धमकी सुनना कि पैसे अपने पास रखो और निभाओ। एक ही सांस में टेप की तरह बजकर वह सारा हिसाब बताएगी कि दस रुपये दो वक्त की सब्जी पांच रुपये रोज का दूध जिससे बच्चा की जरूरत भी पूरी नहीं होती है डेढ़ सौ रुपये का राशन, दो सौ रुपये की साल तेल साबुन घी, फिर मिट्टी का तेल, गैस का सिलेंडर, मेहमान, तीज-त्यौहार का खर्च—और न जाने क्या क्या मर्दें उसे कण्ठस्थ है। किशोर इस हिसाब किताब से बहुत घबराता था। इसलिए नहीं कि यह मोटा मोटा हिसाब उसकी समझ में नहीं आता था बल्कि इसलिए कि समझने के बाद वह कुछ कर नहीं सकता था।

किशोर ने देश के नेताओं का अनुकरण करके समस्या से निपटने का सरल समाधान ढूंढ लिया था कि समस्या से आंख मूंद लो। इसीलिए हर महीने का वेतन घर लाने के दिन वह वीतराग योगी की-सी मन स्थिति बनाकर अपने कमरे में बंद हो जाता था। उस शाम को घर में कौन क्या करेगा, यह जैसे अलिखित संविधान के अनुसार तय हो चुका था। रात का खाना सब मिलकर नहीं खाएंगे। बच्चे अपना अपना खाना थाली में डाल कर टेलीविजन के सामने बैठकर खाएंगे। लता का उस दिन व्रत होगा। सतोषी मां का नहीं तो एकादशी पूणमासी या मंगल सोम किसी का भी व्रत हो सकता है। किशोर अपने कमरे में बंद किसी पत्रिका या अखबार में साप्ताहिक भविष्य पढ़ेगा या लाटरी के टिकटों का नंबर ढूंढेगा। लता थाली में खाना परोसकर चुपचाप कमरे में रख जाएगी और खाना खत्म होने के बाद चुपचाप थाली उठाकर ले जाएगी। फिर जब 'विविध भारती' का आखिरी गाना सुनने के बाद बच्चे सो जाएंगे तो वह मुंह फुलाए कमरे में आएगी और फर्श पर तकिया चटाई डालकर बत्ती बुझा देगी। और दिनों की तरह वह बटन पर हाथ रखे, पति की ओर देखकर आंखों से कुछ और किन्तु मुंह से 'बुझा दूं' नहीं कहेगी।

किशोर इस रुटीन के पालन में अब पूरी सावधानी बरतता था। एक

दो बार उसने इस रूटीन को तोडने की कोशिश की थी लेकिन उसके परिणामस्वरूप बिना 'बुझा दू' वह बत्ती बुझाने का क्रम कई दिना तक खिच गया। मे ऐसे अवसर थे जब बात स बात निकलते निकलत मकडी का जाला तयार हो गया था और दोना उसस छूटन के लिए कई दिना तक हताश कोशिश करते रह थ।

लगभग तीन साल पहले ऐसी ही एक रात को किशोर ने लता की आदता पर आक्षेप किए थे। घर के खर्चों का पुराना रोना सुनने के बाद किशोर न झुभलाकर कहा था "सतोषी मा की व्रत पूजा मे और शेरावाली के कीतना मे जो भेंट चढनी है उसका हिसाब भी तो बताओ।" बस इतनी-सी बात पर वह बिगड उठी थी "आपको मेरी व्रत पूजा फूटी आख नही सुहाती। आपको मेरे हर काम स नफरत है। आप चाहते हैं कि मैं इस जेलखान मे घुट घुटकर मर जाऊ।'

"अच्छा तो यह घर जेलखाना है और वह कीतन का अड्डा जहा शराब पीकर रात भर लोग चीखते चिल्लाते हैं, वह मदिर है, तीथस्थान है। मैं जानता हू वहा क्या क्या होता है।

'क्या होता है ? '

"कहने की क्या जरूरत है।

नही, मैं जानना चाहती हू। मैं आपके मुह से सुनना चाहती हू। आप यू ही हर आदमी को शक की नजर स दखत हैं।'

य ही नही। उसका कारण है। य सब राजनतिक प्रचार के अडड हैं।"

'घूम फिरकर बात वही आ गई न। आपको चिढ तो इस बात की है कि मैंन रोमा दवी का वोट क्या दिया।'

'मर चिढन की उसम क्या बात है। वोट तो किसी न किसी का देना ही होता है। हर आदमी जिस चाहे वोट द सकता है। जिन्हान रोमा दवी को वोट नही दिया उन्होने कौनसी शाति कर दी। है तो सब एक ही मिट्टी के।

'लेकिन आपको तो उनस चिढ है। वो लखपति महिला होकर भी मेरी इज्जत करती थी। सभा का प्रधान खुद बन सकती थी लेकिन उन्होन

मुझे प्रधान बनाया। हर काम मे मेरी सलाह लेन ग्राती थी। वो वोट मागन ग्राइ तो क्या मना करती ?"

"बिल्कुल मना नही करना चाहिए था। लकिन जब उन्ही रोमा दवी ने पुलिस के छाप से बचन के लिए करैंसी नोटा का बक्सा तुम्हारे घर छिपाना चाहा था तब क्या मना कर दिया था ?'

लता के पास इसका कोई जवाब नही था। उस दश्य को याद करके वह काप उठी। नोटो का भरा बक्सा रोमा देवी के नौकरा के हाथो से गिर गया था ग्रौर एक कब्जा निकल जान से सौ सौ के नोटो का एक बडल बाहर ग्रा गया था। लता तब पसीन से भीग गई थी ग्रौर उसका गला सूख गया था। पास खडे किशोर स नोटो के बडल को बक्से म ठूसकर उसे तुरत वापस ले जाने के लिए नौकरो को कहा था। उसके बाद लता छ सात दिनो तक बिस्तर पर पडी रही थी।

लबी नोक झोक के ग्रवसर उसके बाद बहुत कम ग्राए। कारण यह था कि उस घटना के बाद लता ने ग्रौरतो की कीतन मडली म जाना बद कर दिया था ग्रौर रोमा देवी के नाम से वह चिढने लगी थी। व्रत-उपवास पहले की तरह चलते रहे। लेकिन रोमा देवी के काले धन का रहस्य जानन के बाद लता को ग्रपनी ग्राथिक स्थिति का एहसास तीव्र हो उठा था ग्रौर महीन की पहली तारीख को वह ग्रौर भी तीव्र हो उठता था।

किशोर लता की मन स्थिति को समझता था। व्रत उपवासो के ढकोसना म चिढन के बावजूद वह कभी इस बात को लेकर लता पर ग्राक्षेप नही करता था। ग्रभावो के तीव्र बोल मे वह ग्रपना सयम न खो बैठ इस लिए ग्रामदनी ग्रौर खच के सार ममले को दिमाग से निकाल दने के लिए वह वीतराग योगी का मुखौटा पहन लेता था।

ग्राज भी वह यही नुस्खा ग्रपना रहा था। पत्नी कमरे मे खाना रख गई तो उसन चुपचाप खाना खा लिया ग्रौर चादर तानकर सो गया।

मा फलेषु कदाचन

प्रीतमसिंह की आदत बन चुकी थी कि वह घर के पास वाले बस स्टाप पर न उतरकर एक स्टाप पहले उतर जाता था और फिर पैदल अपने स्टाप तक जाता था। इसका क्या कारण था, इसका विश्लेषण करने की प्रीतम सिंह को न कभी फुरसत मिली और न कभी जरूरत महसूस हुई। शायद उसे उस मार्केट के बीच से गुजरना अच्छा लगता था जिसे उसने बांसों और सरकंडों की झोंपड़ियों से विकसित होकर आलीशान, चकाचौंध वाली मार्केट बनते देखा था। बाहर की तरफ अधिकांश दुकानें फलों और मेवों की थीं और अन्दर की तरफ की दुकानें साग सब्जियों की। बीच वाली गली के दोनों ओर कपड़े, मनियारी, पसारी आदि की दुकानें थीं।

मार्केट के अन्दर की तरफ घूमकर प्रीतमसिंह कभी कभार जाता था। बनी ठनी औरतों की भीड़ में से गुजरते समय उसे गुदगुदी तो होती थी लेकिन पाउडर क्रीम की सुगंध के भभके से उसे मितली सी भी आने लगती थी। कभी सब्जी घर ले जाने के इरादे से वह साग सब्जी की गली से भी निकलता था लेकिन सब्जी खरीदने का मौका शायद ही कभी आता था। भाव पूछते ही वह चुपचाप आगे बढ़ जाता था।

लेकिन फलों और मेवों की दुकानों से होकर वह लगभग रोज ही गुजरता था। शायद उसे रंग बिरंगे फलों को देखना बहुत भला लगता था। उसका जन्म और पालन पोषण हिन्दुस्तान के ऐसे इलाके में हुआ था जहां बारहों महीने फल होते थे और बिना किसी दाम के किसी भी आदमी को उपलब्ध होते थे। बचपन से बना फलों से यह लगाव ही शायद उसे रोज इन फलों की ओर आकृष्ट करता था। शायद दुकानों में सजे तरह-तरह के फलों को देखकर और उनकी खरीदारी करने वाली औरतों की भीड़ को

देखकर वह यह अनुमान लगा सकता था कि हिंदुस्तान के जिस इलाके में वह जनमा और बड़ा हुआ वहां इस समय कौनसा मौसम चल रहा है। मेवा की दुकानों पर सरसरी नजर डालना भी उसे बहुत अच्छा लगता था। किशमिश, बादाम, अखरोट, काजू आदि को देखकर उसे हैरत होती थी कि इनके रंग रूप में कहीं कोई तबदीली नहीं आई है। बचपन में कभी तीज त्यौहार पर एक पैसा मिल जाने पर वह भटरू दुकानदार से किशमिश खरीदता तो कमीज की जेब भर जाती थी। बादाम तो पत्थर पर रखकर तोड़ने पड़ते थे और कभी ज्यादा चोट पड़ने पर उनकी गरी का चूरा हो जाता था तो कभी बादाम उछलकर नाली में जा गिरता था और बेकार हो जाता था। किशमिश में यह सारा झंझट नहीं था इसलिए, उसे किशमिश खरीदना ही ठीक लगता था। कभी कभी उसके मन में बड़ी इच्छा होती थी कि किशमिश को छूकर देखें कि यह वही किशमिश है जो बचपन में उसकी मनपसंद चीज थी, या नहीं। लेकिन कीमतों के लेबल को पढ़कर उस दुकानों के करीब जाने की कभी हिम्मत नहीं पड़ी।

देश के बटवारे के बाद जब प्रीतमसिंह इस शहर में आया था तो उसकी अवस्था बीस के आस पास थी। माता पिता दो छोटी बहनों और एक छोटे भाई के साथ वह तीन वर्ष तक जंगल में बने शरणार्थी शिविर में रहा था। अब उस जंगल का या उस शरणार्थी शिविर का एक जरा सा निशान भी बाकी नहीं है। उस जगह पर दुमंजिला मकानों की लम्बी चौड़ी बस्तियां बस गई हैं। फल सब्जियों की यह मार्केट ही एक निशान है जो प्रीतमसिंह को उस वक्त की याद दिलाती है। इसी जगह शरणार्थियों ने खोखे और सरकंडों की झोंपड़ियां बनाई थीं। एक झोंपड़ी प्रीतमसिंह के पिता सुजानसिंह ने भी बनाई थी और उसमें रेडीमेड कपड़ों की दुकान चलाई थी। प्रीतमसिंह की मां और दो बहनें घर पर कपड़े सीती थीं और प्रीतमसिंह के पिता दुकान पर बैठते थे। प्रीतम भी स्कूल की छुट्टी के बाद दुकान पर आ जाता था और पिता के काम में हाथ बटाता था। छोटा भाई ध्यानसिंह अभी काफी छोटा था और वह कभी कभी मन बहलाने के लिए दुकान पर आता था।

पिता की मृत्यु के बाद प्रीतमसिंह के सामने दुकान को चलाने या

छोड़ने का संकट उपस्थित हुआ था। मैट्रिक करने के बाद उसने गाम के कालज म दाखिला ले लिया था और सरकारी दफ्तर म क्लर्क हो गया था। पढ़ा लिखा होने के कारण उसने झोपड़ी म दुकान लगाने की अपेक्षा सरकार की पक्की नौकरी में बने रहना ज्यादा लाभप्रद समझा। उसके नजदीकी रिश्तदारो ने भी उसे यही सलाह दी।

लेकिन दुकान बद देने और पूरी तरह दफ्तर का बाबू बन जाने के बाद भी प्रीतमसिंह का लगाव झोपडिया की इस मार्केट से और यहा के लोगो से बना रहा। उसके बचपन के कई साथी दुकानो के धधे मे लगे रहे और प्रीतमसिंह को बाबू बन जाने के कारण कुछ आदर, कुछ ईर्ष्या के भाव स देखते रहे।

अब प्रीतम को इस मार्केट म बचपन का कोई साथी नही दिखाई देता है। झोपड़िया आलीशान दुकानो मे बदल गई थी और झोपड़ियों म काम करने वाले उसके व साथी, जो पाचवी छठी स स्कूल छोड बैठे थे, तीन तीन कोठिया के मालिक तथा लाखो के कारोबार वाले बिजनेसमैन थे। इस मार्केट के अलावा शहर की और कई मार्केटो मे उनकी दुकानें थी जिन्हे नौकर चाकर चलाते थे। कभी कभार प्रीतमसिंह को कार या मोटर साइकिल स उतरता कोई जाना सा चेहरा दिखाई पड जाता था लेकिन उसकी तरफ हाथ बढाने की उसकी हिम्मत नही होती थी।

फिर भी प्रीतमसिंह के मन म इस मार्केट के प्रति लगाव था जो फलो या मवो के प्रति बचपन के लगाव से किसी तरह कम नही था। मार्केट के कोने म खुले आसमान के नीचे चार पाच टोकरिया की दुकान लगाने वाला लगडा बुड्ढा सौदागरमल अब भी उसे दखकर 'राम राम' करता था, और कभी उसे रोककर घर का हाल चाल भी पूछ लेता था। सौदागर भगो था लेकिन अपने को मुलतानी बताता था। उसके चार लडको की चार दुकानें अलग अलग जगहो पर अलाट हो चुकी थी लकिन खुद उसने तीस साल पहले की तरह खुले म दुकान लगाना नही छोडा था। कभी कभी जब कमेटी की गाडी आनी थी और पटरी पर फल सब्जियां बचने वाला म भगदड मच जाती थी तो सौदागरमल अपनी चार पाच टोकरिया को साथ वाली दुकान म पहुचा दता था। यह उसके बडे लडके की दुकान थी।

सौदागरमल की उमखुली दुकान का अपना राजथा और प्रीतमसिंह उस राज को भली भांति जानता था। हर बार जब चुनाव होने थे तो सौदागरमल के लिए एक सुनहरा मौका हाथ लगता था। चुनाव के कुछ दिन पहले सडक के किनारे बासा और सरकडा की झोपडिया बनने लगती थी और उन पर उस पार्टी के झंडे लहराने लगते थे जिसकी हवा होती थी। लेकिन दूसरी पार्टी का झंडा भी एक कोने मे लगा रहता था ताकि चुनाव उलटा पडने पर रातो रात जीती हुई पार्टी का झंडा ऊचाई पर लहराया जा सके। झंडा के साथ नेताओ के कैलेंडर और फोटो भी सर्टीफिकेट के तौर पर दुकान मे रखे जाते थे। वोट मागने वाले झोपडियो के बदले दुकानें या मकान अलाट करवाने का वायदा करते थे और जो भी पार्टी जीतती थी, उसे झुग्गी झोपडी वाला को कुछ न कुछ देना पडता था।

दुकानो की तरह का इतिहास मकानो के फैलने और कोठियो मे बदलने का भी था। हर चुनाव के निकट आने पर नये कमर जोडे जाते थे, नई जगह हथियाई जाती थी। झंडो की अदला बदली की सावधानी के कारण चुनाव के बाद इस छीना झपटी पर मुहर लग जाती थी। कभी-कभी मकानो को तोडा भी जाता था लेकिन अगले चुनावा म दुगुनी जगह घेर ली जाती थी।

सौदागरमल ने इसी तरह चार बेटो के लिए चार दुकानें अलाट कराई थी और चार मकान बना लिए थे। अब अपने लिए एक और दुकान लेने की फिक्र मे था।

प्रीतमसिंह पत्नी और बच्चा के साथ सौदागरमल की लडकी की शादी पर गया था। गुड्डी की शादी मे दिए गए दहेज को देखकर प्रीतमसिंह की आखें फटी रह गई थी। फ्रिज, टी० वी०, घर का सारा फर्नीचर बेतन भाडो के अलावा कीमती साडिया दजना के हिसाब से खरीदी गइ थी। सडक के किनारे फलो की चार पाच टोकरिया रखकर दुकान करने वाला लगडा बुडढा सौदागरमल उस एक बडा रईस जमीदार दिखाई दिया था।

सौदागरमल के अलावा उस मार्केट मे प्रीतमसिंह से अच्छी जान-पहचान रखने वाला नन्दलाल था जो लोहे का सामान, बतन भाडे और

छिटपुट घरलू मामान की दुकान करता था। न दलाल की बहन म प्रीतम सिह की मगाई की बात कभी चली थी लेकिन वह बीच मे ही टूट गइ थी क्योकि प्रीतमसिह क पास जायदाद के नाम पर एक भी भापड़ी नहीं थी लेकिन प्रीतमसिह न दलाल की बहन पुष्पा को मन म चाहता था और वह दहेज मे बिना एक कौडी लिए शादी करने को तैयार था। लेकिन नन्दलाल और उसके नजदीकी रिश्तेदारो को अपनी हैसियत म इतना नीचे गिरना स्वीकार नही था इसलिए बातचीत टूट गई थी। इसके बावजूद प्रीतमसिह के मन मे पुष्पा के पिता और दूसर घरवालो के प्रति हमेशा आदर भाव बना रहा। नन्दलाल की स्थिति अब उतनी अच्छी नही है। दुकान है लेकिन उसके कम्पीटीशन की चार पाच और दुकानें वहा खुल गई हैं। न दलाल के दोनो लडके पढ लिखकर नौकरियो पर लग गए है और बूढे नन्दलाल के लिए दुकान चलाना अब काफी मुश्किल हो रहा है। प्रीतमसिह को कभी कभी अपने पास बिठाकर नन्दलाल अपने बीत दिनो की याद कर लेता है और अपने हारे हुए मन को दिलासा दे लेता है।

बहुत दिनो तक प्रीतमसिह के लिए इस मनलुभावनी मार्केट म न दलाल और सौदागरमल पुरान दिनो की याद दिलान वाले रह। फिर एक दिन सडक के किनारे साइकिल पर लाटरी के टिकट बेचन वाल न उस नाम लेकर पुकारा। मुडकर पुकारन वाले की तरफ देखा तो प्रीतमसिह खुशी स उछल पडा, 'अर भाई नाभासिघा किथे हो? की हाल चाल न ?"

दोनो गले स मिले। नाभासिह न बताया कि वह कई सालो स लाटरी के टिकट बेचन का धन्धा कर रहा है। इस मार्केट म वह कभी कभी एक डेढ घट के लिए दुकान लगाता ह। भगवान की दया स रोटी मिल रही है बच्चे पल रह ह।

प्रीतमसिह को नाभासिह स गहरी सहानुभूति थी। उसकी तरह नाभा सिह भी किस्मत का मारा और भगवान की तरफ स बसहारा था। एक भुग्गी पर सतोष करके उसन बर्षो तक दुकान मकान के अलाटमेट का इतजार किया था लेकिन उसे घूसखोर अफसरो बाबुओ और नता लोगो

स तग ग्राकर सारी उम्मीदें छोडनी पडी थी। एक बार लाटरी म पाच हजार का इनाम ग्रा जाने पर उसने सस्ता सा किराय का मकान ले लिया था ग्रौर लाटरी के टिकट वेचने का धधा शुरु कर दिया था। विके ग्रनबिके टिकटो पर कभी किमी बडे इनाम के ग्रा जान स सार पाप धुलने की उम्मीद ने उम इस धधे म फमाए रखा। ग्रब कोई ग्रौर काम करना उस ग्रनभव लगता है। हा, बच्चो को पढा लिखा दिया है। दो लडके दफ्तर म क्लक हो गए ह। लडकी का ब्याह कर दिया है।

प्रीतमसिह की तरह नाभासिह भी शहर के विकास के पूरे इतिहास का माक्षी है। झुग्गी झोपडियो के हर नई वस्ती मे फलन, फिर बडी-बडी दुकाना म बदलन, बिकन, बदलन ग्रौर कारखानो के खडे होने, राजा महा राजाग्रा के महलो जैमी कालोनिया के उभरन ग्रौर फिर झुग्गी झोपडियो के बीमारी के कीटाणुग्रा की तरह फैलन पर रोक लगाने के लिए, सबको उठाकर शहर क बाहर बडी बडी कालोनियो म इकट्ठा करने के इतिहास की रोमाचकारी यात्रा के किस्स नाभासिह भी उतनी ही खूबी स सुना मकता था जितनी खूबी मे प्रीतमसिह। झुग्गी झोपडी से उठकर ग्रासमान की ऊचाइया को छन वाले सफल व्यक्तिया के सभी व्यावमायिक रहस्या से परिचित होत हुए भी नाभामिह ग्रौर प्रीतमसिह उनम उतनी दूर थे कि उनकी परछाइ को छूना भी उनके लिए ग्रसभव है। वे उन्ह दूर से मात्र देख मकते थे उमी तरह जसे प्रीतमसिह इन मन ललचाने वाली फलो की दुकाना को दूर से देख सकता था।

कइ वर्षों के बाद नाभासिह को प्रीतमसिह दिखाई दिया था। दोना शापिग करने वाले मरदा ग्रौर ग्रौरता की भीड के बीच फुटपाथ पर मिले। कुशल ममाचार हुए। बीवी-बच्चा का हाल-चाल पूछा सुनाया गया। जब प्रीतमसिह चलन लगा तो नाभासिह को याद ग्राया कि प्रीतम की उमन काइ खातिर नही की। उसे बाह पकडकर रोकन हुए नाभासिह न सामन फल की दुकान पर ग्रावाज लगाई "ग्रोए बलविदरा, दो गिलाम रस छेती नट्ट ग्रा।"

प्रीतमसिह का दिल बैठन लगा। दो रुपय पचास पैम का एक गिलास यानी दा गिलामो के पाच रुपय। उसकी जेब म तीन रुपये से ज्यादा नही

हुगे। वायदे मे मुझे नाभासिंह को रम पिलाना चाहिए। कुछ झिझकते हुए बोला "भई एक गिलास मगाग्गे, ग्रपने लिए। मैं तो रम पीता नहीं हू। गला पकड लता है।"

'ग्रर छोडो गला तो मरा भी पकडता है, लेकिन जरा जरा-सी बातो स डरकर रहे तो हो गई छुट्टी।"

लापरवाही स पाच का नोट रम वाले के लडके को देते हुए नाभासिंह बोला 'भई ग्रप्पन न तो उसूल बना रखा है कि काम किए जाग्रो फल भगवान देगा। दना होगा तो दगा, नहीं देना होगा ता ससुरा न द। इसी उसूल पर सोलह साल से लाटरी के टिकट वच रहा हू, कभी तो दगा।'

प्रीतमसिंह की हसी बरबस फूट पडी। उस एक लतीफा याद ग्राया। न जान कहा पढा था। काम करो, फल की चाहना मत करो।'—भगवान कृष्ण न गीता म कहा था। उसने उम्र भर गीता के इस उपदेश पर ग्रमल किया था ग्रौर हर रोज बिला नागा इस मनलुभावनी मार्केट क सामन स गुजरते हुए भी कभी फल की चाहना नहीं की थी।

बदली का आदेश

मिस्टर कौशिक को बदली का आदेश अभी मिला नहीं था लेकिन उन्हें इसकी भनक लग गई थी। सुबह सैर से लौटते हुए उन्हें घर के पास मल्होत्रा साहब मिल गए थे और उन्होंने ही इस मनहूस खबर का संकेत दिया था। कौशिक और मल्होत्रा पड़ोसी थे और चूंकि मल्होत्रा उस विभाग में थे जो प्रशासनिक गतिविधियों का धड़कन केन्द्र माना जाता था इसलिए कौशिक मन ही मन मल्होत्रा को सौ गालियां देकर भी उन पर अविश्वास नहीं कर सका।

हर बार सरकार बदलने के साथ इस धड़कन केन्द्र की तरफ बड़े अफसरों की निगाह लग जाती थी। छोटे दर्जे के अफसरों और मामूली कर्मचारियों को भी बदली या मुअत्तली या जबरन रिटायरमेंट का डर सताने लगता था लेकिन यह बात सिर्फ उन पर लागू होती थी जो सरकारी वेतन पर राजनीति की हांडी को पूरे मन से समर्पित थे। बड़े अफसरों का डर व्यापक घना और बिना किसी शर्त या अपवाद के होता था क्योंकि वे अक्सर महत्वपूर्ण जगहों पर होते थे और उन जगहों पर हर नई सरकार अपने अपने आदमी बिठाना चाहती है।

मिस्टर कौशिक भी महत्वपूर्ण पद पर थे। हालांकि उनका वेतन कोई खास ज्यादा नहीं था। पुराने पद से वर्तमान पद पर आने पर उन्हें कोई विशेष आर्थिक लाभ नहीं हुआ था। उनके नीचे काम करने वालों की संख्या भी ज्यादा न थी लेकिन दफ्तर के अध्यक्ष के नाते उन्हें टेलीफोन, गाड़ी आदि की जो अनेक सुविधाएं मिली थीं उनके कारण उनका रुतबा बढ़ गया था। पड़ोसियों और रिश्तेदारों की नजर में, बीवी-बच्चों की नजर में और साथी अफसरों की नजर में उन्हें जो दर्जा मिला हुआ था,

उसके सहसा छिन जाने के डर ने कौशिक को विचलित कर दिया।

सरकार के पलटते ही उन्होंने अपने को पलटना चाहा लेकिन अपनी अन्तरात्मा के प्रति जरूरत से ज्यादा वफादार होने के कारण वे अपने और साथी अफसरों जैसी फुर्ती के साथ अपना रंग बदलने में असफल रहे थे। वैसे साढे ग्यारह तक दफ्तर आने और अढाई घंटे का लंच लेने की पुरानी आदत पर एकदम काबू पाकर वे ठीक दस बजे दफ्तर पहुंचने लगे थे और दस बजकर दस मिनट पर स्टाफ की हाजिरी का रजिस्टर अपने कमरे में रखवाने लगे थे। लेकिन आदमी तो वह नहीं होता जो वह अपनी दृष्टि में होता है। तो वह वही हो सकता है जो दूसरों की नजर में वह होता है।

उस दिन सुबह ठीक दस बजे जब वे कुर्सी पर आकर बैठे तो उन्हें लगा कि उनका संसार उनसे छिन गया है और वे बिल्कुल अकेले, असहाय और लाचार हैं। सुबह नाश्ते के वक्त पत्नी ने उन्हें कई कामों की याद दिलाई थी। मकान का नया पलस्तर करने के लिए दफ्तर के ठेकेदार को याद दिलाने की बात कही थी। टेलीविजन खराब पड़ा था। बच्चों की जरूरत का हवाला देते हुए उसे दफ्तर के मैकेनिक से आज ही ठीक कराने की बात भी कही थी। सरकारी स्टोर से महीने भर का सामान और फ्रिज का पेट भरने के लिए बड़ी मार्केट से फल सब्जियां लाने की फरमाइश भी की गई थी। कौशिक ने पत्नी की इन फरमाइशों को चुपचाप सुना था लेकिन भीतर ही भीतर वे फूट पड़ने को हो रहे थे। उनकी इच्छा हो रही थी कि पत्नी से चीखकर कहें कि तुम सब लोगों ने मेरा जीना हराम कर दिया है लेकिन वे कुछ कह नहीं सके थे। पत्नी की तरफ एक सूनी नजर डालकर रह गए थे और कौशिक को यह सोचकर कुछ राहत मिली थी कि उन्हें बच्चों की सवालों आकांक्षाओं से भरी नजरों का सामना नहीं करना पड़ा था।

कुर्सी मिस्टर कौशिक के बैठते ही थोड़ी चरमराई। मेज के ऊपर चमचमाते सनमाइका में उनका चेहरा प्रतिबिम्बित हो रहा था जो उन्हें बहुत भद्दा और भोंडा लग रहा था। मेज पर उंगली फिराकर उन्होंने उंगली पर लगी धूल को देखा। फराश ने मेज को अच्छी तरह नहीं पोंछा था। उन्होंने घंटी बजाई लेकिन कोई चपरासी अन्दर नहीं आया। सब

हरामखोर हो गए है' उन्होने मन ही मन कहा, और फिर खुद ही दराज से एक पुराना डस्टर निकालकर मेज़ को पोछने लगे। मेज़ के एक कोने पर फाइलो का ढेर लगा था। इन फाइलो को वे कल घर ले गए थे लेकिन सुबह मूड खराब हो जाने के कारण उन्हे ज्यो का त्यो वापस ले आए थे।

उन्होने अपने कमरे के चारो ओर नजर दौडाई जिसे उन्होने फाइनेंस के अडर सक्रेटरी की खुशामद करके छ महीने पहले सुरुचिपूर्ण ढग से 'फर्निश' कराया था। खिडकियो पर लगे पर्दो का कपडा उन्होने खुद खरीदा था। कूलर बदलवाने के लिए कितने लोगो को कहना पडा था और उनके जायज़-नाजायज़ काम करने पडे थे। मेज कुर्सियो के अलावा विश्राम के लिए काच और बढिया लच टेबल भी मुश्किल से प्राप्त किया था। आर्थिक लाभ न सही लेकिन मानसिक सतोष की सभी आवश्यक स्थितियो का लाभ उन्होने इस पद पर आकर अर्जित किया था।

उन्हे लगा कि यह सब चीजें, जिन्हे उन्होने बडी हसरत से इकट्ठा किया था, उनसे छिन गई है। उन्हे सब चीजो मे एक परायापन दीखने लगा और अपने आपको वे एक घुसपैठिये के रूप मे देखने लगे।

जितना ही वे अपनेआपको समझाते थे कि बदली की खबर अभी बिल्कुल इनीशियल स्टेज मे है और किसी को इसकी भनक नही मिली होगी, उतना ही उन्हे इस बात का यकीन होने लगता कि खबर सब जगह फैल चुकी है और उन्हे छोडकर बाकी सब लोगो को इसका पता लग चुका है। उन्हे लगा कि फराश को भी इसकी खबर लग चुकी होगी, तभी उसने उनकी मेज को अच्छी तरह नही पोछा। चपरासी भी शायद इसीलिए अब तक नही आया।

तभी धीरे से दरवाजा खुला और चपरासी दोनो हाथ जोडकर उनके सामने आ खडा हुआ।

मिस्टर कौशिक ने उसकी तरफ एक खाली-सी नज़र घुमाई। कुछ कहना चाहा लेकिन कह नही सके। चपरासी नम्रता से बोला—"साहब, रास्ते मे साइकिल पक्चर हो गई।" मिस्टर कौशिक को लगा कि वह व्यग्य से कह रहा है कि आपका पक्चर हो गया। आपकी हवा निकल गई और अब आप साइकिल की फटीचर ट्यूब की तरह है। लेकिन वे

इन सब बातो को पीकर सिर्फ इतना ही बोले, "हाजिरी के रजिस्टर ले आओ।"

चपरासी के कमरे से चले जाने पर मिस्टर कौशिक ने फाइलों के ढेर से एक फाइल उठाकर अपने सामने रखी। अभी उसका नाटा खोला ही था कि उन्हें फाइल से विरक्ति सी होने लगी। उन्होंने अधखुली फाइल को उसी तरह मेज पर पड़े रहने दिया और कुर्सी से पीठ टिकाकर उठ गए।

सहसा वे कुर्सी पर तनकर बैठ गए जैसे उन्होंने कोई बहुत बड़ा निर्णय मन में ले लिया हो। टेलीफोन उठाकर उन्होंने एक नम्बर घुमाया और आवाज का इंतजार करते करते पिन कुशन से एक पिन निकालकर दांत कुरेदने लगे। फिर पिन को एहतियात से मेज पर रखकर बोले, 'हैलो वर्मा साहब! क्या हाल चाल है? भई मैं कौशिक बोल रहा हूं। अरे भई क्या करें। सरकार बदली है, कुछ सावधानी तो रखनी ही पड़ेगी। वक्त की पाबन्दी तो इस वक्त मस्ट' है। और आपके क्या हाल चाल हैं? कोई नई बात ? नहीं। हमारे यहां सब ठीक ही है अब तक तो। अरे हां, हां यह भी कोई कहने की बात है। हम आपके सेवक हैं। हैं हां। ठीक है, ठीक है।

टेलीफोन पर हुई बातचीत ने मिस्टर कौशिक में थोड़ा उत्साह भर दिया। उन्होंने एक नम्बर और घुमाया और फिर मेज पर पड़े पिन को उठाकर दांत कुरेदने लगे। "हैलो, मैं कौशिक बोल रहा हूं। कल मैंने आपके पास अपने पी० ए० को भेजा था। जी हां, वह आपसे मिला था। उसने मुझे वापस आकर जो रिपोर्ट दी थी, उसके मुताबिक आपने उसे तीन घंटे बाहर बिठाए रखा और फिर खाली हाथ भेज दिया। मिस्टर रमन यह तो व्यवहार की बात है आपसी संबंधों की बात है। क्या आप समझते हैं कि आपको मेरी मदद की जरूरत नहीं पड़ेगी? भई यह तो एक हाथ से ले दूसरे से दे का सीधा सीधा व्यवहार है। कोई बात नहीं। आगे से हम भी ध्यान रखेंगे ठीक ठीक गुड्डिया।'

रिसीवर को फोन पर पटकने के बाद वे फिर कुर्सी पर टेक लगाकर बैठ गए। उनका चेहरा तमतमा उठा था।

चपरासी ने हाज़िरी के छ सात रजिस्टर लाकर उनकी मेज़पर रख दिए थ। थोडी देर साहब के आदेश के लिए वह खडा रहा था। फिर साहब के मूड को भापकर चुपके स बाहर निकल गया था और चुपचाप दरवाज़े के बाहर रखे स्टूल पर बैठ गया था। घटी की तीखी-नराट आवाज़ सुनकर वह हडबडाकर उठा और दरवाज़ा खोलकर अन्दर जा खडा हुआ। "रास्ते म तुम्हारी साइकिल पक्चर हो गई थी। यहा पानी के नल भी बन्द हैं ?" कहत-कहत उन्होने चपरासी की नजरो म नजर मिलाकर यह जानने की कोशिश की कि उसे उनकी स्थिति का कुछ आभास लग गया है या नही।

चपरासी को अपनी भूल का पता चला। लपककर उसन प्लास्टिक का जार उठाया और कूलर स ठडा पानी लेने चला गया। मिस्टर कौशिक ने ढेर स एक और फाइल ली। सरसरी नज़र डालकर उस भी पहली फाइल की तरह अधखुला एक तरफ रख दिया। कुछ सोचकर उन्होन मेज की दराज खोली और उसम स अपन व्यक्तिगत कागजो का फोल्डर निकाला बैक की पासबुक मे अपन बलेंस पर नजर डालन के बाद भविष्य निधि की रकम को जोडन लग। एक पैड पर पेंसिल से उ होन भविष्य निधि, ग्रैच्युटी, छुट्टियो के वेतन का हिसाब लगाया पेंशन का हिसाब लगान म उन्ह कुछ और कागज पत्रो को भी देखना पडा। अब पैड पर उनका सारा हिसाब तैयार था। यदि वे इस समय रिटायरमट ले लें तो उन्ह हजार रुपय के लगभग पेंशन मिलेगी और ग्रैच्युटी, जी० पी० फड वगैरह स कुल मिलाकर पचास हजार की राशि मिलेगी। उन्होन अनुमान लगाया कि इस रकम से कोई भी काम शुरू करके वह उतना तो कमा ही सकते हैं जितना वह सरकारी नौकरी म सम्मानरहित जीवन बिताकर कमा रहे है।

चपरासी पानी का जार भरकर ले आया था। जार को तिपाई पर रखकर उसने एक गिलास पानी साहब की मेज़ पर रख दिया था। बिना साहब के आदेश की प्रतीक्षा किए वह फिर बाहर निकल गया था और कटीन से चाय का हाफ सेट' ले आया था। जब वह साहब के लिए चाय बनान लगा तो मिस्टर कौशिक अपना हिसाब लगा चुके थे और अपन मन मे बोझ को कुछ हल्का महसूस करने लगे थे।

चाय का कप हाथ म लेते हुए उन्होंने चपरासी से कहा—"यह पास बुक लेकर जरा बैंक चले जाओ। हाथों हाथ इसे कम्पलीट करा ले आना। और सुप्रिटेंडेंट से कहो कि आज की डाक मुझे भेज दें।" और जब चपरासी चलने को हुआ तो फिर कहा, "मुझे कुछ जरूरी काम करने है। मिलने वालो को मना कर देना।'

चपरासी के चले जाने पर मिस्टर कौशिक मेज पर कुहनी और कुहनी पर माथे को टिकाकर बैठ गए। "यह कैसे चलेगा?' वे सोचने लगे 'इस माहौल म कोई क्या काम करेगा? लेकिन यह सब हुआ कैसे?' जरूर किसी ने मेरे खिलाफ किसी के कान भरे हैं। कौन हो सकता है? अपने ही लोगो मे से कोई हो सकता है। क्या इसकी कोई काट नहीं ढूंढी जा सकती? किसी एम० पी० को पकड़ना होगा। जब सब लोग ऐसा करते हैं तो मेरे ऐसा करने म कौन बुराई है। लेकिन किसको पकड़ा जाए? घनीराम की काफी पहुच है। एम० पी० भले ही न हो, धाक मन्त्री से कम नहीं है। उसकी मैंने कितनी मदद की है जब वह विरोधी पक्ष म था। लेकिन वह तो खाने-पीने वाला आदमी है। बिना खाए पिए वह अपने बाप का भी काम नहीं करता। हजार दो हजार तो उसे दिया जा सकता है। लेकिन उससे ज्यादा मागेगा तब मुश्किल होगी।

चपरासी डाक लेकर आया। मिस्टर कौशिक डाक के फोल्डर को खोलकर पत्रो पर सरसरी नजर डालने लगे जैसे उन्हें किसी खास पत्र की तलाश थी। चपरासी सामने खड़ा कुछ कहने के लिए साहब की नजरो के उठने की प्रतीक्षा कर रहा था। जब मिस्टर कौशिक का ध्यान उसकी तरफ गया तो उन्हें लगा कि चपरासी उनके चेहरे को पढ़ने के लिए वहा खड़ा हुआ है। गुस्से से उन्होंने कहा—

"तुम खड़े क्यो हो? बैंक का काम कर आए?"

"जी, अभी जा रहा हू। वह डरते डरते बोला, सुप्रिटेंडेंट साहब ने कहा है कि कुछ अर्जेंट फाइलें आपके पास हैं। वो आ जाए साहब?"

'नहीं, उन्हें कहो, जरूरत होगी तो मैं बुला लूगा।' अभी मुझे फुर्सत नहीं है।

टेलीफोन की घंटी बजी। एक क्षण के लिए उनके मस्तिष्क म यह

बात कौंधी कि किमी भी ममय यह टेलीफोन उनको वह अशुभ सूचना दे मकता है जिसकी आशका सुबह से उन्हे खाए जा रही है। उनकी इच्छा हुई कि टलीफोन को बजता रहने दें। लेकिन फिर कुछ सोचकर रिमीवर उठा लिया। फोन पत्नी का था। "हा, हा, मुझे याद है। लेकिन मैकेनिक आज छुट्टी पर है। अरे, ऐमी भी क्या मजबूरी है। किसी टी० वी० की दुकान स मकेनिक बुला लो। पद्रह बीस रुपय ही तो लेगा। ज़रा-सी बात के लिए क्यो किमी का एहसान लें। नही भई, तुम नही समझती हो। आजकल माहौल कुछ ठीक नही है। और हा सब्जी वगैरह भी वही खरीद लो। दो चार पस की बचत के लिए इतना झझट कौन करे? शाम को दोनो चलकर ले आएगे-\बात को समभने की कोशिश करो। आजकल हर बात म सावधानी बरतनी पडती है। निम्मो स्कूल स आ गई? और सुहास? अच्छा ठीक है। मैं जल्दी ही आ जाऊगा।

इस बीच चपरासी फाइलो का एक ढेर और ले आया था और पहले ढेर के साथ दूसरा ढेर लगाकर चला गया था। मिस्टर कौशिक न फाइलो के ढेरो पर नजर डाली और उनकी इच्छा हुई कि इनको दियासलाई लगाकर जला दे। उन्होने खडे खडे ढेर की फाइलो के शीर्षक एक एक करके पढने की कोशिश की फिर खीजकर बीच में यह काम छोडकर बैठ गए। अपनी टेबल डायरी के पन्नो में वे किसी महत्वपूर्ण चीज की खोज करने लगे। लगभग सारी डायरी ढूढने के बाद उन्हे धनीराम का पता मिल गया। उनका चेहरा खिल उठा। पते को एक कागज पर नोट करके उन्होंने घटी बजाई। चपरासी के आने पर बोले, 'ड्राइवर स गाडी लगाने को कहो। और सुनो, मैं एक जरूरी मीटिंग पर जा रहा हू। चार बजे तक न लौटू तो कमरा बद कर देना।' फिर कुछ सोचकर बोले, "और फोन आए तो मसज नोट कर लेना अच्छा छोडो फोन उठाना ही मत। कोई पूछे तो कह देना साहब मीटिंग म गए है।'

चपरासी कहना चाहता था कि मगनसिंह चौकीदार के घर म तार आया है। वह आज रात की गाडी से जाना चाहता है। उसकी छुट्टी की फाइल कल से फाइलो के ढेर मे पडी है। लेकिन साहब का मूड बिगडा हुआ देखकर वह कुछ कहने की हिम्मत नही जुटा सका।

लेकिन अभी तक वह फैसला नहीं कर पाया था कि लच कहां और कैसे किया जाए।

सुबह जब वह नय पद पर काम करने के लिए घर म निकला था तो काफी कशमकश के बाद उसन यही निणय किया था कि जिस तरह वह डिब्ब म लच रखकर कालेज जाया करता था उस तरह अब नही जाना चाहिए। कालज की अध्यापकी की तुलना म प्राजेक्ट अफसर का पद काफी बडा था और फिर माहौल भी वहा दूसरा था। कालेज म सब लेक्चरर स्टाफ रूम म मिलकर लच लेत थे। सब छोटे छोटे डिब्बा म अपना लच लात थ और एक दूसर के डिब्ब से आदान प्रदान भी सहज हो जाता था। उस लगा था डिब्बे मे लच रखकर दफ्तर ले जाना उसके पद की शान क खिलाफ होगा। कटीन म चाय-बिस्कुट मगाकर काम चलाया जा सकता है।

लकिन पेट की आदत तो वही थी। अध्यापक के पेट से अफसर का पद बन जान के बावजूद उसने हमेशा की तरह साढे बारह बजे ही कुल-बुलाना शुरू कर दिया था। करदीकर के पास न लच बाक्स था और न उस कटीन आदि के बारे म कुछ ज्ञात था।

दो बार वह अपनी मेज का बटन दबा चुका था। चपरासी ने शक्ल नही दिखाई। उसे अभी तक अलग से कोई चपरासी नही दिया गया था। आस पास के कमरो क किसी चपरासी न उसकी घटी सुनने की जरूरत नही समझी या हो सकता है सब लच के लिए चल दिए हो या अपने अपने साहबो का लच लाने कटीन गए हो।

जब घडी म एक बजकर एक मिनट हो गया तो उसन निणय किया कि वह खुद ही बाहर जाएगा और अपने अनुभाग मे कटीन के बारे म पूछताछ करेगा। धीरे स दरवाजा खोलकर और बरामदे मे दस बारह डग भरकर वह अपने अनुभाग के कमरे मे चला गया।

एक मज के गिद अनुभाग के छ सात लोग जमा थ। मज पर अखबार बिछा था और उस पर लच के डिब्ब खुले थे। कुछ लोग कुर्सिया पर बैठ-कर और कुछ मेज के गिद खडे होकर खाना खा रह थ। अपन नये अफसर को अचानक कमर म आता दखकर सबकी नजरें उसकी तरफ घूम गइ।

कुर्सी पर बैठी हुई दो लडकिया हडबडाकर खडी हो गई। मुह का और मुह म और हाथ का हाथ म रह गया। नये अफसर के इस बेवक्त आ टपकने पर लच का स्वाद भी कुछ फीका होने लगा। करदीकर खुद भी झेंप गया था। "माफ कीजिए मैं यू ही चला आया था। यहा पास कोई कटीन है?" करदीकर इतना ही कह सका, हालाकि वह पूछना चाहता था कि क्या अनुभाग का चपरासी कटीन स कुछ ला सकता है। लच लेन वाले व्यक्तियों मे जो सबसे सीनियर दिखाई देता था और जो सभवत अनुभाग का इचाज था, बोला—

"कटीन तो पहली मजिल पर है। मैं किसी चपरासी को पकडकर भेजता हू। क्या मगवाऊ? कॉफी या चाय?" और वह इस अदाज से अपनी जगह से उठा जैसे स्वय जाकर कटीन स सब कुछ ले आएगा। लेकिन करदीकर ने कहा—

"नही मैं खुद ही वहा चला जाऊगा। बात यह है कि कॉफी चाय स काम चलता दिखाई नही देता। भूख जरा तज लग रही है।"

करदीकर मुडकर कमरे से बाहर जाने वाला ही था कि एक लडकी जो उसे काफी सुन्दर लग रही थी (वैसे उस दफ्तर की हर लडकी सुन्दर लग रही थी) बोली—"आइए, लच हमारे साथ शेयर कर लीजिए।"

करदीकर ने उस लडकी की तरफ देखा और कहा—

"आप महिलाए तो स्वभाव से उदार होती हैं। हर ऐरे-गरे नत्थू खरे को, जो भोजन के समय आ टपकता है, अपने हिस्से का खाना खिलाकर खुद भूखी रह लेती हैं। लेकिन बाकियो का भी खयाल कीजिए। कई लोग भूखे रह जाएगे।" उसकी इस बात से सब लोगो के चेहरे के भाव बदल गए। एकसाथ दो तीन लोग बोल पडे, "अजी साहब, खाना बहुत है।" वह लडकी और उत्साहित होकर बोली, "सात घरो का खाना है और आज तो एक डिब्बा फालतू है। आइए।"

न चाहते हुए भी करदीकर को उनका प्रस्ताव मानना पडा। एक आदमी ने कुर्सी खाली करके उनकी तरफ खिसका दी, लेकिन करदीकर ने खडे रहना ही मुनासिब समझा। तीन डिब्बो म गोभी की सब्जी थी। एक म आलू चने, एक म बगन का भरथा, एक म रायता और एक म

राजमाह थे। रोटी का टुकडा हाथ मे लेकर ग्रौर सब्जी के डिब्बो पर सरसरी नज़र डालकर करदीकर बोला, "गोभी ने हैटट्रिक मारा है।"

सब लोग इस पर हस दिए। उस लडकी ने, जिसका नाम माधुरी था, कहा, "ग्रजी, यह गोभी ही ग्राजकल सबसे ग्रच्छे फाम मे है।" इस पर करदीकर की हसी इतनी ग्रनानक फूटी कि उस मुह का कौर मुह म रखने मे काफी परेशानी हुई। फिर बात को सभालत हुए उसने कहा— "भई हमने जो बात कही वह तो बहुत घिसी पिटी थी। कालेज मे हम लोग इसी तरह मिलकर लच लेत थे ग्रौर ग्रक्सर ऐसा होता था कि बाजार म जो सब्जी सस्ती होती थी वह एकसाथ कई डिब्बो स प्रकट हो जाती थी। ऐसे मौका पर 'हैटट्रिक' शब्द का प्रयोग वहा ग्रक्सर किया जाता था। लेकिन (माधुरी की तरफ देखकर) इन्होने जो फाम की बात कही वह बिल्कुल ताजी ग्रौर मौलिक थी। कालेज मे हममे से किसी को 'हैटट्रिक' को फाम के साथ जोडने की बात नही सूझी थी।"

माधुरी इस ग्रचानक तारीफ से खुश हो गई। एक दुबले पतले, दाढी-वाले युवक ने इस पर कहा, "ग्रजी साहब माधुरी जी के क्या कहने। उनका दिमाग ग्रभी बिल्कुल ताजा ग्रौर मौलिक है। दफ्तर म ग्राए ग्रभी तीन ही महीने तो हुए है।"

करन्दीकर के मुह से बेसाख्ता हसी फूट पडी। दूसरे लोगो ने उस दुबले पतले व्यक्ति की फब्ती का ग्रथ समझा या नही, यह कहना तो मुश्किल है, लेकिन ग्रपने ग्रफसर को हसता देखकर वे सब भी हस दिए।

लच समाप्त करने के बाद सबने एक ही गिलास से बारी-बारी पानी पिया ग्रौर फिर करन्दीकर ग्रनुभाग के लोगो के प्रति ग्राभार प्रकट करके ग्रपने कमरे मे ग्राकर बैठ गया।

उसने घडी पर नज़र डाली। ग्रभी एक बजकर बीस मिनट हुए थ। पिछले पद्रह मिनट, जब वह ग्रपने ग्रनुभाग के कमचारियो के साथ लच ले रहा था, इतने सहज ढग से बीते थे कि लच को लेकर दिमाग म बना घट-भर का तनाव ग्रब बिल्कुल दूर हो गया था। बेकार ही सुबह लच का डिब्बा साथ लेने से वह डरा था। कल स वह ग्रपने पुराने डिब्बे मे लच लाया करेगा ग्रौर यहा सबके साथ मिलकर लच लिया करेगा।

लेकिन करन्दीकर इस बात से बिल्कुल बेखबर था—जिन पन्द्रह मिनटों को वह महज मान रहा था उन्होंने उसके छोटे से कमरे की चारदीवारी के बाहर काफी हलचल मचा दी थी। सब अनुभाग के कर्मचारियों में नये अफसर के स्वभाव को लेकर बातें हो रही थीं।

अधीक्षक श्री शर्मा कह रहे थे, 'नये साहब बहुत भोला इन्सान है। उनमें अफसरियत की जरा भी बू नहीं है।'

दुबले पतले सहायक दिनेशचन्द का कहना था, 'अभी नये मुर्गे हैं। दो चार दिन बाद देखना क्या रंग बदलते हैं।''

माधुरी जो अब भी नये अफसर से प्रशंसा पाकर खुश हो रही थी, बोली 'आदमी अपनी नीयत का परिचय एक ही मुलाकात में दे जाता है। नये साहब सचमुच एक भले आदमी लगते हैं।'

माधुरी के साथ बैठने वाली स्टेनो टाइपिस्ट रेखा ने चुटकी ली 'उन्होंने तो पहली ही मुलाकात में माधुरी पर जादू कर दिया।'

रविकुमार, जो एकाउंट का काम करते थे बोले, 'फिलहाल तो उनका क्रेडिट डेबिट से ज्यादा है लेकिन आगे चलकर देखें ऊंट किस करवट बैठता है।'

मोहन जो अभी नया नया क्लर्क लगा था सबकी बातें ध्यान से सुन रहा था और अपनी स्थिति से नये साहब की स्थिति की तुलना मन ही मन कर रहा था। उसकी बगल में काम करने वाला मिस्टर गुप्ता सोच रहा था कि कल से यह नया मुर्गा हमारे झुंड में आएगा या बगल वाले कमरे में अफसरों के झुंड में जा मिलेगा।

करन्दीकर जानता था कि सरकारी नियमों के अनुसार लंच आधे घंटे का होता है। लेकिन परम्परा के रूप में अफसर और अधीनस्थ सभी एक घंटे का लंच करते थे। फिर भी नया दफ्तर होने के कारण उसको परम्पराओं के बारे में अपने को आश्वस्त करना उसके लिए जरूरी था। इसलिए वह कमरे से निकलकर बगल वाले अफसर के कमरे में घुस गया। उस समय कमरे के अन्दर लंच पर बैठे चार अफसर किसी मजेदार प्रसंग पर जोर का ठहाका लगा रहे थे। करन्दीकर को कुछ संकोच तो हुआ लेकिन शीघ्र ही उसका बड़ी सरगरमी के साथ स्वागत भी हुआ।

आइए, आइए—करदीकर साहब," मिस्टर सक्सेना ने उनका स्वागत किया—"क्या लंच ले चुके ?"

'हमने तो आपको याद किया था' "छाबड़ा साहब बोले, "पता चला, स्टाफ की तरफ से आपकी दावत है।"

करदीकर ने अपनी सफाई देने के उद्देश्य से कहा—'नहीं, मैं तो यूं ही वहां पहुंच गया था। भाई लोग इसरार करने लगे तो उनका साथ देना पड़ा।"

"यह तो बहुत अच्छी बात है," चौधरी ने विचार प्रकट किया, "अपने स्टाफ के साथ घुल मिलकर काम करने के कई फायदे हैं।'

'फायदे भी हैं और नुकसान भी", कुमार साहब ने अलग स्वाद वाली बात कही 'अफसर और स्टाफ के बीच एक दूरी तो रहनी ही चाहिए। नहीं तो काम करना मुश्किल हो जाएगा।"

करदीकर को मिस्टर कुमार की बात काफी लचर लगी, लेकिन उन्होंने उसे आगे बढ़ाना ठीक नहीं समझा। पास से एक कुर्सी खींचकर वह गोल दायरे में बैठ चुका था।

करदीकर के कमरे में आने से पहले चारों के बीच जो मजेदार प्रसंग चल रहा था, वह रुक गया था। करदीकर अब भी झेंपा हुआ था। उसके यह पूछने पर कि लंच डेढ़ बजे खत्म होता है या दो बजे, चारों ने उसकी तरफ ऐसे देखा जैसे वह चिड़ियाघर का प्राणी हो और तब उसकी झेंप और भी बढ़ गई।

मिस्टर छाबड़ा बोले, "लगता है मिस्टर कपूर आज छुट्टी पर हैं, नहीं तो वे अब तक मिस्टर करदीकर को दफ्तर के सारे कायदे कानून समझा चुके होते।' इस पर उन चारों के बीच एक और कहकहा लगा। सक्सेना बोला 'वह पट्ठा अपने अंडर सैक्रेटरीपन का रौब झाड़ने का मौका नहीं चूकता। नये आदमियों पर तो वह एकदम से हावी हो जाना चाहता है।'

मिस्टर कुमार बोले, 'आप लोग उस बेचारे के साथ ज्यादती करते हैं। बेचारे को अपने पद से इतना संतोष प्राप्त करने का तो हक होना ही चाहिए। आखिर क्लर्की से घिसटना पिसटना अंडर सैक्रेटरी बना है। थर्ड

चलास बी० ए० हुआ तो क्या है। जिंदगी म कई पापड बेले हैं, कितने ही अफसरों की साग सब्जी ढोई है, कितनों के गददे और लिहाफ बनवाए हैं कितनों के बच्चों को स्कूल पहुचाने का काम किया है और कितनों की बीवियों की फरमाइशें पूरी की हैं।"

एक और कहकहा गूजा और उसके बीच ही चौधरी साहब बोले—

'लबी तपस्या का फल तो मिलता ही है। आप पीएच० डी० हैं टेक्नोलाजी के एक्सपर्ट है, विज्ञान की ऊची डिग्री हासिल किए हैं होते रहिए। आपकी औकात क्या है? गर्दन तो आपकी इन्ही लोगों के हाथ म है। जब चाहें आपका टेंटुआ मरोड सकते हैं। यह क्या कम संतोष की बात है उनके लिए?"

चौधरी साहब अपने क्षेत्र के विशेषज्ञ थे। विदेश म तीन साल रहकर डिप्लोमा ले आए थे। वर्षों तक सेक्शन अफसर के ग्रेड की नौकरी के लिए तलवे घिसने के बाद बडी मुश्किल से लोक सेवा आयोग से चुनकर आए थे। भीतर से जले भुने बैठे थे, इसलिए मन की भडास निकालने का कोई भी मौका नहीं चूकते थे।

लेकिन मिस्टर सक्सेना की एप्रोच उन सब से अलग थी। उन्हें गुस्सा नही आता था केवल दु ख होता था गहरा दु ख जो कभी कभी बडी मासूमी के शब्दों में व्यक्त होता था। चौधरी की बात को पकडते हुए वे बोले, अरे भाई, इनके हाथ में सिर्फ हमारी ही गर्दन नही, सारे देश की गर्दन है। वे जब चाहे सारे देश का और सारे समाज का टेंटुआ दबा सकते है। बल्कि दबा रखा है। वैज्ञानिक योजना बनाते हैं, कारखाने खडे करते हैं उत्पादन बढाने के लिए दिन रात सिर खपाते हैं। इनका काम है चलते पहिए पर कील घुसेडकर उसे जाम कर देना। महीनों की मेहनत से हम प्रोजेक्ट तैयार करते हैं और ये नामुराद कलम की एक घसीट से उस पर पानी फेर देते है। मैं पूछता हू इस देश म किस चीज़ की कमी थी? क्या योजनाए कमजोर थी? पैसे की कमी थी? फिर क्या नही वह सब हुआ जो होना चाहिए था? गरीबी की रेखा म आने वाले लोगों की संख्या घटने के बजाय क्या बढी? चंद सेठों की धन्नाशाही घटने के बजाय ज्यादा क्या हुई? मैं कहता हू यह ब्यूरोक्रेसी हमारे देश के लिए अभिशाप है। साम्राज्यशाही

के दाना पानी पर पनी यह घोडी लोकतन्त्री समाज मे सिफ दुलत्ती मारने का काम कर सकती है।''

मिस्टर सक्सेना आवेश म यह सब बातें कह गए। उनके मन का बोझ अब काफी हलका हो गया था। करदीकर को लगा कि मिस्टर सक्सेना के चेहरे पर एक गहरी व्यथा के साथ साथ एक परदुखकातर महानता का पवित्र भाव झलक रहा है।

करदीकर को बोलने का अभी कोई अवसर नही मिला था। मिलता भी तो उसके पास बोलने के लिए कुछ नही था। उसकी नजर कभी एक की तरफ कभी दूसरे की तरफ मुडती थी और वह बडे मनोयोग से उनकी बातें सुन रहा था।

मेज पर अब भी लच के अवशेष बिखरे पडे थे। तीन टिफिन करियरा के डिब्बे इधर उधर बिखरे पडे थे जिनका बचा खुचा माल यह दिखा रहा था कि यह अफसर लोगो का लच टेबल है। गोभी ने वहा भी हैटट्रिक मारा था लेकिन गोभी के अलावा और भी बहुत कुछ था। टिफिन कॅरियर के तीन डिब्बो मे से एक मे गोभी की सब्जी, एक मे दाल और एक मे प्याज टमाटर का सलाद था। दूसरे का कम्बीनेशन गोभी, आलू चिप्स, अचार चटनी और तीसरे का गोभी, रायता और पापड। चौथे अफसर के जिम्मे म चार केले, चार सतरे थ और चाय का सट सबने मिलकर मगवाया था।

करदीकर को लगा कि लच मे इन लोगो के साथ शामिल होना उसके लिए बहुत मुश्किल होगा। तीन डिब्बा वाला टिफिन कॅरियर खरीदना तो इतना कठिन नही होगा, लेकिन उसे घर से लाने के लिए नौकर की व्यवस्था करना सचमुच उसके लिए फिलहाल असभव है। पता नही उसके मन की कशमकश को मिस्टर कुमार कस ताड गए। उनकी तरफ देखकर बोले, 'मिस्टर करदीकर, कल स आप लच लेने के लिए हमारे कमरे मे आ जाया कीजिए। इसी बहाने कुछ गपशप, कुछ तबादला खयाल हो जाता है। दफ्तर की टेंशन को भूलने के लिए लच टाइम बहुत महत्वपूण होता है और इसका पूरा फायदा उठाना चाहिए।'

करदीकर को अब अपने मन का रहस्य खोलना पडा। वह बोला,

'बात यह है कि मेरा घर यहां से काफी दूर है। टिफिन कैरियर उठाकर लाने के लिए कोई नौकर भी नहीं है।"

मिस्टर छाबडा ने उसकी समस्या का हल बताया—"अरे भाई, इसके लिए नौकर की जरूरत नहीं होती। कुछ लडके पद्रह सोलह रुपये महीने पर टिफिन लाने का काम करते हैं। बस किसी को पकड लो।' चौधरी ने तो एक सुझाव देकर काम को और भी आसान कर दिया। वे बोले—तीन लोगो का खाना आता है। उनके खाने मे एक एक रोटी फालतू आ जाया करेगी। एक आदमी कुछ फल ले लेता है। आप चाय पिला दिया कीजिए।'

करदीकर ने घडी पर नजर डाली। दो बजने मे अब भी पद्रह मिनट बाकी थे। उसे फिर यह प्रश्न पूछने की जरूरत नहीं पडी कि लच टाइम के बारे मे इस दफ्तर की परम्परा क्या है। अब तक यह स्पष्ट हो चुका था कि लच दो बजे तक चलेगा। इतने मे टेलीफोन की घटी बजी और छाबडा साहब ने लपककर रिसीवर उठाया, 'हैलो, मैं छाबडा बोल रहा हू। हा हा, बठे है। आपके कमरे मे? लेकिन बात क्या है? नया नया आया है। इरादे तो साफ है आप लोगो के? अच्छा, अच्छा। मैं कहता हू।'

रिसीवर रख देने के बाद वे करदीकर की तरफ देखकर बोले 'डिप्टी सेक्रेटरी सुरेन चन्द्रा ने आपको बुलाया है। ग्यारह नम्बर कमरे मे।

मुझे?' करदीकर ने आश्चर्य से पूछा।

हा भई, डरते क्या हो? आप नये नये आए है। सब लोग अपना परिचय बढाना चाहते है। और देखो डिप्टी सैक्रेटरी के रौब मे न आना। अभी कुछ दिन पहले प्रोमोशन हुआ है उसका। हम लोगो की ही कटगरी का था। फर्क इतना है कि हाथी का रग सफेद है। वस वह कह रहा था कि वह आपको जानता है।

करदीकर को सुरेन चन्द्रा नाम के किसी सज्जन की याद नहीं थी। फिर भी जब बुलाया है तो जाना ही पडेगा। वह उठकर चल दिया।

ग्यारह नम्बर कमरे के अन्दर दाखिल होते ही उसने पाच आदमियो के सामने अपने को खडा पाया। [illegible]

पर बिखरे पडे थे और उसके चारो ओर पाच कुर्सियो पर पाच महानुभाव विराजमान थे। लच के अवशेषो म फरक इतना सा था कि वहा एक प्लट मे बिस्कुटो का चूरा और पान के निशान लिए कागज के दो टुकडे भी मुडे हुए पडे थे।

करदीकर के लिए एक कुर्सी खीचत हुए सुरश च द्रा बोले, "आइए, करदीकर साहब। कसा लगा आपको नया दफ्तर ? भई आप कालज की रगीन दुनिया को छोडकर फाइलो की इस सूखी दुनिया म क्यो आए यह बात हमारी तो समझ म नही आई।' मिस्टर कपूर न बीच म कहा—'दाने दाने पर लिखा है खान वाल का नाम। जहा जिसका दाना पानी है, वही तो आदमी जाएगा।'

मिस्टर कपूर आस्थावान और भाग्यवादी होने के साथ शेरावाली माता के भी जबरदस्त भक्त थे और बाबाओ मे भी उ ह बडी श्रद्धा थी। उनकी बौद्धिक ज्योति को जगाने वाले थे आचाय रजनीश जो उनकी दष्टि म बीसवी सदी के सबस बडे अध्यात्मज्ञानी और दाशनिक थे।

सुरेश च द्रा न बारी बारी से करदीकर का परिचय लोगो स कराया। मिस्टर कपूर के अध्यात्मज्ञान की चर्चा करन के बाद उ होन मिस्टर सतोष मिस्टर सिंह और मिस्टर भटनागर का एक ही शब्द अडर सैक्रेटरी कहकर परिचय दिया फिर अपने पर आकर बोले— मुझे तो शायद आप पहचानत ही होग ?

करदीकर को अब भी कुछ याद नही आया तो व बोले, 'अरे भई, याद है, हमन एकसाथ एम० ए० किया था ?'

'ओह ! सुरेश जी ?' करदीकर का चेहरा चमक उठा। सुरेश च द्रा ने कहा, "हा, मैं वही सुरेश हू। आप तो चल गए लेक्चररशिप की तरफ और हमने आई०ए०एस० का जुआ खेला। तगडा पौवा नही था, इसलिए अच्छे नम्बरो पर पास होन के बावजूद इटरव्यू म कट गए। लेकिन पी० सी० एस० कर लिया। और अब कोटे मे नम्बर आ गया तो आई० ए० एस० भी हो ही गया हू।' करदीकर को सचमुच इस बात पर बहुत खुशी हुई, यह उसका चेहरा ही बता रहा था। हालांकि उस आइ० ए० एस० को अच्छे नम्बरो मे पास करने के सुरेश के दावे पर सन्देह था। वह जस

तैसे यह क्लास में एम० ए० पास कर सका था। बी० ए० में मर मरकर पास हुआ था। फिर भी एक पुराने साथी के आई० ए० एस० बन जाने की उसे खुशी थी और वह खुशी सहज रूप से उसके चेहरे पर प्रकट हो रही थी।

मिस्टर सतोष भी आई० ए० एम० फेल, पी० सी० एस० पास अडर सैक्रेटरी थे। सुरेन्द्र चन्द्रा की प्रोमोशन से दुखी भी थे। वे बोले, "अजी, आई० ए० एस० में भी धाधली और सिफारिश चलती है।"

'सिफारिश तो हर जगह चलती है और चलती रहेगी।' भटनागर साहब ने अपना योगदान दिया, "क्या यूनिवर्सिटियों में सिफारिश नहीं चलती? हमारी यूनिवर्सिटी का रिकार्ड है कि अब तक जितनी भी टॉप पोजीशन आई है, उनमें सत्तर फीसदी यूनिवर्सिटी के प्रोफेसरों और रीडरों के लड़के लड़कियों की हैं। मेरे साथ एक प्रोफेसर की लड़की पढ़ती है। बी० ए० तक वह सैकेंड क्लास से आगे नहीं बढ़ी लेकिन एम०ए० में फर्स्ट क्लास मिला और छूटते ही लेक्चररशिप भी मिल गई। अब बताइए, यह सब कैसे हुआ?"

करदीकर को लगा कि भटनागर ने उस पर तीर चलाया है। लेकिन वह कुछ कह नहीं पाया। मिस्टर कपूर ने हस्तक्षेप करते हुए कहा, 'अजी छोड़िए इन बातों को। जिसकी किस्मत में जितना लिखा है, उतना ही तो उसे मिलेगा। खैर, आप सुनाइए करदीकर साहब। आपको दफ्तर कैसा लगा?"

करदीकर बोला, "दफ्तर बहुत अच्छा है। लोग भी अच्छे हैं। कल तक मेरे मन में डर जरूर था कि न जाने कैसा माहौल हो लेकिन आज सारा डर दूर हो गया।" --

हमारे लायक कोई सेवा हो तो सकोच मत कीजिए। मैं एडमिनिस्ट्रेशन देखता हूं। चपरासी कुर्सी, मेज स्टेशनरी वगैरह की कोई कठिनाई हो तो आपकी मदद करके मुझे खुशी होगी। हा, दफ्तर के कुछ जरूरी नियम-कायदों की फाइल मैं आपको दे दूगा। उनको एक बार पढ़ लेंगे, तो आपको दफ्तर के माहौल में अपने को एड्जस्ट करने में काफी आसानी होगी।

सुरेश चन्द्रा ने मिस्टर कपूर की बात का समर्थन करते हुए कहा, "हां, नये माहौल में एडजस्ट होने में आपको अभी कुछ वक्त लगेगा। दस बारह दिन तक आप सिर्फ माहौल का जायजा लीजिए। अभी मैं आपको हल्का फुल्का काम अलाट करा देता हूं। बाद में आप जैसा चाहेंगे, वैसा हो जाएगा। आप तो हमारे पुराने साथी हैं। आप जब चाहें, बेरोकटोक मेरे कमरे में आ सकते हैं और अपना हक जता सकते हैं। हां, आप लंच कहां लेते हैं?"

करदीकर यह नहीं बताना चाहता था कि लंच मैंने विभाग के कर्मचारियों के साथ लिया था और न ही वह इस सत्य से इनकार करना चाहता है। उसने इतना ही कहा, "आज तो मैंने उन लोगों के साथ ले लिया।" जिसका अर्थ अफसरों और अधीनस्थ कर्मचारियों दोनों हो सकता था।

"आप चाहें तो कल से हमारे कनेर में शामिल हो सकते हैं।"

दो बजकर दस मिनट हो चुके थे, इसलिए सुरेश चन्द्रा अपनी कुर्सी से उठ गए। दूसरे लोग भी उठने लगे और उस परिवर्तन का लाभ लेते हुए करदीकर भी मिस्टर कपूर के सुझाव के उत्तर में मात्र 'ठीक' कहकर उठ गया।

अपने कमरे में वापस आकर जब करदीकर कुर्सी पर बैठा तो उसके मन में यही प्रश्न घूम रहा था कि कल का लंच कहां और कैसे लिया जाएगा।

उद्घाटन

निमन्त्रण-पत्र को घर से निकलते वक्त फुक्कन मिया ने सभालकर जेब म डाल लिया था। इतने बडे जलसे मे शामिल होने का फुक्कन मिया को जिन्दगी मे पहली बार मौका मिला था। उसके भानजे करीम मिया को घासीराम के कला केन्द्र मे लिफ्टमैन की नौकरी मिली, तभी उसके भाग्य म यह दिन देखने को मिला था।

करीम मिया ने पिछली शाम उसके हाथ मे जलसे का काड देत हुए कहा था, 'मामूजान, यह जलसा कोई ऐसा वैसा नही है। शहर की एक मशहूर कम्पनी का नाच-ड्रैमा होगा और खुद मन्त्री साहब उसका उदघाटन करेंगे। सारा इन्तजाम बडे बडे अफसरो के लिए किया है। देखोगे तो तबीयत झक हो जाएगी। इस ड्रैमे के लिए कोई पाच सौ रुपये खच करने को तयार हो तब भी देखने को न मिले। खास खास आदमियो के लिए पास बने हैं। इन्तजाम करने वाले बाबू स दोस्ती गाठी तब जाकर मुश्किल स एक पास मिला है।'

फुक्कन मिया का नाच और ड्रामे का पुराना शौक था। बचपन म विक्टोरिया और अल्फ्रेड कम्पनी के नाटक और कज्जन बाई के नाच क पीछे इतने दीवाने थे कि खाना पीना भूल जाते थे। इधर अनेक वर्षों से उन्हान कोई नाटक या नाच नही देखा था। शहर मे कई नाटक होत थे जिनकी सूचना फुक्कन मियां को उर्दू अखबार म छपे इश्तिहार से बराबर मिलती रहती थी, लेकिन टिकट की दर को देखकर वे नाटक का खयाल ही दिल से निकाल दत थे। बचपन की यादें इतनी ताजा थी कि रात को मस्जिद के बाहर खुले मदान में रात काटन वाला की भीड हमशा उन्हें घेरे रहती और अल्फ्रेड कम्पनी या कज्जन बाई के नाच के किस्स सुनती

रहती।

साढे छ बजे म त्री माहब उदघाटन करने वाले थे और उसके बाद नाच डामा होने वाला था। करीम मिया ने कह रखा था कि छ बजे तक पहुच जाए ताकि ठीक ठाक जगह मिल जाए। फुक्कन मिया का विचार था कि मन्त्री का उदघाटन भी ड्रैम से कम नही होगा, इसलिए वे ठीक पाच बजे घर से निकल पडे थे। तग मोहरी के पाजामे के ऊपर उन्होन तीन पैंव द लगी पुरानी शेरवानी पहनी थी और सिर पर दुपल्ली टोपी पहनी थी जो करीम मिया की शादी पर उन्हे मिली थी।

फुक्कन मिया धीरे धीरे पैदल चलते हुए, करीम के कहे अनुसार छ बजे से कुछ मिनट पहले वहा पहुच गए। शहर की बसो पर चढन से उन्होने कई साल पहल तौब, कर ली थी जब एक बार भीड म भिचकर उनका दम घुट गया था और वे मरते मरत बचे थे। इक्के टागा के दिन तो कभी के लद चुके थे। उन्हे देखना भी अब नसीब नही होता था। स्कूटर टैक्सी करने मे वे वैसे ही डरत थे क्योकि उन्हे किराये से ज्यादा फालतू किराया देना अखरता था। और फिर घासीराम का कलाकद' उनके लिए कोई खास दूर भी नही। टहलते टहलते वे अक्सर वहा तक जाया करते थे।

जी० आर० कला केन्द्र को फुक्कन मिया घासीराम का कलाकद ही कहते थे। घासीराम को वे बचपन स जानत थे। बडा मशहूर हलवाई था और कलाकद के लिए तो वह दूर दूर तक मशहू र था। फुक्कन मिया के देखत-देखत घासीराम हलवाई का सितारा ऐसा चमका कि वे कई बिल्डिगो और कारखानो के मालिक बन गए। फिर एक दिन उन्होने सुना कि घासी-राम ने एक कई मजिला बिल्डिग बनाई है जिसका नाम उन्होने रखा था जी०आर० कला केन्द्र' लेकिन फुक्कन मिया के मुह पर यह अजीब नाम कभी नही चढा और वे घासीराम का कलाकद' ही कहते रहे। एक दिन वे बचपन की जान पहचान का हवाला देकर घासीराम से मिले और भानजे करीम का कही ठौर ठिकान लगान की बात कही। बस, करीम मिया की किस्मत खुल गई और उन्ह लिफ्टमैन की नौकरी मिल गई।

फुक्कन मिया जब वहा पहुचे तो सजधज देखकर उनकी अक्कल चकरा गई। सडक म लेकर हाल के दरवाजे तक रग बिरगी कनातें लगी

थी और बीच मे बेशकीमती लाल गलीचा बिछा था। पुलिस के दो सिपाही रास्ते के दोनो तरफ खडे थे और आठ-दस सिपाही डडे हाथ म लेकर इधर उधर टहल रहे थे। फुक्कन मिया को लगा कि अगर उमन कनातो के बीच चलकर गलीचे को मैला करने की कोशिश की तो पुलिस के सिपाही उसकी गदन दबोच लेंगे। उन्होने अनुमान लगाया कि यह कनातो और गलीचे वाला रास्ता मत्रिया और अफसरो के लिए होगा पब्लिक के लिए कोई दूसरा रास्ता होगा। उन्होने बिल्डिंग के चारो तरफ चक्कर लगाकर दूसरा रास्ता ढूढने की कोशिश की लेकिन कोई और रास्ता दिखाइ नही दिया। उन्ह यह भी डर लगा कि कोई सिपाही उन्ह यू टहलता देख लेगा तो किसी शक म पकड लेगा। अन्त मे उन्होने यही निश्चय किया कि वह बाहर सडक की पटरी पर बैठा रहेगा और करीम के बाहर आने का इतजार करेगा।

लेकिन करीम तो फुक्कन मिया को अन्दर ढूढ रहा था। इक्के दुक्के मुसाफिर को दूसरी मजिल पर पहुचाने के बाद जब लिफ्ट नीचे आती तो वह लिफ्ट स बाहर निकलकर बरामदे म मामूजान को ढूढता। हाल भी दूसरी मजिल पर था और ड्रामे म आने वालो को लिफ्ट मे ही पहुचाना पडता था। लिफ्ट छोडकर बाहर आना करीम के लिए मुश्किल था। जब छ बजकर पन्द्रह मिनट हो गए तो करीम मामूजान को ढूढने के लिए बाहर सडक पर आ गया। सडक की पटरी पर बैठे मामूजान को देखकर करीम को बडी झल्लाहट हुइ लेकिन जब मामूजान ने अपनी परेशानी बताई तो करीम जोर स हस पडा। मामूजान की बाह पकडकर करीम उन्ह अन्दर ले गया लेकिन गलीचे पर पर रखते हुए मामूजान की जान निकली जा रही थी। उन्हें लग रहा था कि उनका पैर किसी भी लम्हे फिसल जाएगा और वह धडाम स गिर पडेगा। करीम मिया की बाह को कसकर पकडे हुए फुक्कन मिया ने जसे तैस वह मखमली रास्ता तय किया। जब करीम ने उसे लिफ्ट म चढाया और लिफ्ट का दरवाजा बन्द किया तो फुक्कन मिया की सास रुक गई। लेकिन इमस पहले कि वे कुछ कहते लिफ्ट 'घच्च' से ऊपर उठी और फुक्कन मिया का कलेजा नीचे धसता लगा। उन्होने करीम की तरफ देखा और कुछ कहना चाहा लेकिन गला जसे सूख

गया था। वे कुछ बोल नही सके और तभी लिफ्ट दूसरी मजिल पर आकर रुक गई। करीम के दरवाजा खोलते ही फुक्कन मिया उचककर लिफ्ट से बाहर आ गए। फिर करीम से बोले "तुम सारा दिन इसमे काम करत हो। अगर यह बीच मे फेल हो जाए तो क्या होगा ? यह तो दोजख है दोजख। मैं तो अब इसमे बैठकर नीचे नही जाऊगा। मुझे तो सीडियो के रास्ते ले जाना।"

करीम हस दिया। मामूजान को बाह से पकडकर वह हाल मे दाखिल हुआ।

हाल बहुत वडा था। करीब पाच सौ कुर्सिया थी। लेकिन अभी तक हाल मे आठ दस लोग ही थे। य सब भी ड्रामे का इतजाम करने वाले अफसर और बाबू थे। बडा अफसर लम्बा-तगडा आदमी था। वह बडी बेचैनी से इधर उधर घूमकर दूसरा को हुक्म दे रहा था—'स्टेज पर तीन कुर्सिया और लगाओ। सोफे को थोडा आगे खिसकाओ। फूल मालाए आ गई ? चाय पानी का प्रबध हो गया ?'

दूसरे लोग बडे अदब से उनकी आज्ञाओ का पालन कर रहे थे और उनके सवालो का जवाब दे रहे थे। अब एक एक, दो-दो करके दर्शक भी हाल मे आने लग थे।

करीम ने फुक्कन मिया को सबसे पीछे वाली लाइन मे एक कुर्सी पर बिठा दिया। पेंट बुशर्ट पहने एक पतला सा लडका उनके पास आकर बोला, "अजी मेहरबान, आगे चलकर बैठो।"

फुक्कन मिया को उस लडके की सूरत बडी भली लगी। करीम मिया ने उस लडके से मामू का परिचय कराया और फिर मामू को बताया कि यही वो बाबू साहब हैं जिन्होंने उन्हे काड दिया था।

वह नौजवान लडका किसी जल्दी म था। बिना रुके वह बरामदे मे निकल गया। करीम भी उसके पीछे पीछे गया। लिफ्ट से दोनो नीचे आए तो वह लडका बोला, "आज तो गजब हो गया। हमारी नौकरी गई।"

'क्यो ? क्या हुआ ?" करीम ने पूछा।

"अरे क्या बताऊ !" वह लडका बोला, "साढे छ बजने मे दस मिनट बाकी हैं। मन्त्री साहब उदघाटन के लिए आने वाले हैं और हाल मे

अभी पचास आदमी भी नही हुए। बडे साहब का पारा चढ गया है। अब सैक्रेटरी साहब आएगे तो मामला और बिगडेगा।"

और वह लडका लिफ्ट स निकलकर तेज कदमो से बाहर की तरफ चल दिया। थोडी देर म वह बाहर सडक पर खडे तीन चार लोगो को लेकर अन्दर आया और करीम न सबको लिफ्ट मे हाल के अन्दर पहुचा दिया।

फुक्कन मिया उसी तरह सबस पीछे की लाइन म कुर्सी पर दुबके हुए बठे थे। हाल म बडा साहब छोट अफसरो को जिस तरह डाट रहा था उसस उन्ह लग रहा था कि डाट जस उन्ही पर पड रही है।

फुक्कन मिया ने अपनी नजर बडे अफसर की तरफ स हटाकर हाल म आए दर्शको की तरफ डाली। पाच छ औरतो का एक झुड एक कुर्सी के आसपास खडा था। उस कुर्सी पर शायद कोई रसूख वाली महिला थी और इसलिए औरतें उसके गिद जमा हो गई थी। फुक्कन मिया ध्यान स औरतों के चेहरो और उनके बनाव शृगार को देखने लगे—'या अल्लाह, क्या लाजवाब हुस्न मिला है इन सबको! कमर के नीचे मोटापा ज्यादा ही सही। लगता है दो नगाडे पीछे बधे हैं लेकिन चेहरे कितने चिक्न सफद हैं! गदन के नीचे आधी पीठ, आधी छाती खुली। फिर जरा सी चोली और उसके नीच फिर पीठ और पेट खुला। फुक्कन मिया को झुरझुरी होने लगी तो वे मर्दो की तरफ देखने लगे। उन्ह कुछ विरक्ति हुई। हर आदमी क चेहरे चूतड और पेट फूले हुए दिखाई दिए। लगता था रबड के खिलौनो मे हवा भर दी गई हो।

बडा साहब दो छोट अफसरो के साथ चलकर फुक्कन मिया के पास आ गया था और वही लोगो स दूर लेकिन फुक्कन मिया के सामने उन्हें डाट रहा था—

'यह क्या इन्तजाम है? तुम सब लोग दो कौडी के हो।'

छोटा अफसर बोला, 'क्या करें साहब हम लोगा न डेढ हजार काड भेजे थ।

आप चुप रहिए मि० शर्मा बडे साहब गुराए 'सफाई देने की कोई जरूरत नही। मैं यह नही सुनना चाहता कि किसन कितने काड

भेजे। काड भेज देने से काम पूरा नही हो जाता। ड्रामा अफसर को टेली-फोन पर लोगों से 'कण्टक्ट' करना चाहिए था।

ड्रामा अफसर जो तीसरे दर्जे का अफसर था, अदब से बोला—

' साहब, हमने फोन पर भी कई लोगो से रिक्वेस्ट की थी।"

"मिस्टर मलिक, मैं जानता हू आपने कुछ नही किया। किया होता तो मेरी यह फजीहत न होती। इस दफ्तर का कोई भी आदमी काम नही करना चाहता। सब हराम का खाना चाहते हैं। आप लोगो ने काड भी देरी से भेजे हैं।'

मिस्टर शर्मा ने फिर सफाई देने की कोशिश की, 'साहब, हम क्या करें। सैक्रेटरी साहब ने इन्विटेशन काड का ड्राफ्ट पाच दिन के बाद क्लीयर किया। फिर रातो रात काड छपे और दूसरे दिन हमने पोस्ट कर दिए।'

"सैक्रेटरी साहब को ड्राफ्ट दिखाने की क्या जरूरत थी। क्या आप लोग इन्विटेशन काड का ड्राफ्ट भी नही बना सकते?"

"साहब, उन्होंने खुद देखना चाहा था।"

' मैं कुछ नही सुनना चाहता। मुझे आदमी चाहिए। हाल भरा हुआ चाहिए। मंत्री महोदय आने वाले हैं। आप लोगो ने मजाक समझ रखा है। मैं तुम सबका 'एक्स्प्लानेशन कॉल' करूगा।'

तीनो अफसर बातें करते हुए फिर स्टेज की तरफ चले गए। हाल मे अब लगभग पचास आदमी आ चुके थे और आगे की सीटो पर बैठ गए थे। सबसे आगे की दो लाइनें मंत्री साहब के साथ आनेवाले बडे लोगों और अखबार वालो के लिए थी जो अभी तक लगभग खाली थी। सिर्फ दो कमरे वाले कोने की सीटो पर बैठे थे।

वह नौजवान लडका घबराया हुआ हाल के पीछे की तरफ आया। करीम ने उसे रोककर पूछा, ' क्या माजरा है? साहब बहुत गुस्से मे हैं।"

लडका घबराई हुई आवाज म बोला, "माजरा वही है। पाच सौ सीटो का हाल और अभी पचास लोग आए हैं। मंत्री जी 'इसल्ट' समझेंगे। हो सकता है बिना उद्घाटन किए चले जाए। सारे दफ्तर की नाक कटेगी। कुछ लोग सस्पेंड हो जाएग। सैक्रटरी तो बेहद बदमिजाज आदमी है।

पता नही किसको क्या कर दे।"

फुक्कन मिया को उस लडके पर बडा तरस आया। वे बोले, "अरे भई, तुम ऐसे आदमियो को काड क्या भेजते हो जो आना नही चाहत। हमें देखो, हमे आपने काड दिया तो आधा घटा पहले यहा पहुच गए। क्यो करीम ?' करीम ने लडके की तरफदारी की, "आपकी बात दूसरी है, मामूजान ! आपको काड तो इन बाबू साहब की मेहरबानी से मिल गया वरना इस ड्रमे मे तो बडे बडे लोग ही आ सकत हैं। मत्री साहब के लिए ड्रैमा हो रहा है।'

नौजवान लडके को मन ही मन बडी झुभलाहट हो रही थी। वह बोला 'बडे लोग जाए भाड म। मैंन इन लोगा मे कहा था कि इन बडे लोगो पर भरोसा न करो। इन लोगो को न पढने लिखन स गज होती है और न कला साहित्य मे। ड्रामा तो आम आदमी की कला है।'

फुक्कन मिया को एक बात सूभी। उन्हाने उस नौजवान लडके से कहा, "अरे भैया, तो परेशानी की क्या बात है। हाल ही भरना है तो मैं दस मिनट में भरे देता हू।'

नौजवान लडके ने फुक्कन मिया की तरफ हैरानी से देखा। फुक्कन मिया बोले, "ठीक कह रहा हू। तुम्हारे पास काड हैं तो मुझ दे दो। मैं अभी चार पाच सौ लोग पकडकर ले आता हू।"

"कहा से ? ' उस लडके ने पूछा।

यहीं पास एक मस्जिद है। उसक बाहर इस वक्त तीन चार सौ लोग पडे होगे। मैं रात को उन लोगो के बीच जाता रहा हू। सभी ड्रमे के शौकीन हैं। मैं उन्हे अल्फेड और विक्टोरिया ड्रैमा कम्पनियो के किस्से सुनाया करता हू। तुम कहो तो मैं उन सबको ले आऊ ?"

नौजवान लडके का चेहरा चमक उठा। फुक्कन मिया के सुझाव का उत्तर दिए बिना वह दौडकर स्टेज के पास गया। बडे साहब को एक कोने में लेजाकर उसने उनस कुछ बात की। बडे साहब न बडे गौर स उसकी बातें सुनी और फिर खुश होकर सिर हिला दिया।

नौजवान लडका तजी स चलकर फुक्कन मिया और करीम के पास आया। उसका चेहरा खिला हुआ था। उसने कहा—

"साहब इसके लिए राजी हो गए हैं। बाउ तो अब नहीं बचे हैं लेकिन मैं आपके साथ चलता हू। जितने भी लोग मिलेंगे, सबको ले आएगे। हाल किसी तरह से भरना चाहिए। मन्त्री जी पन्द्रह मिनट दरी से पहुच रह हैं। इस बीच हम लोगो को लेकर पहुच जाएगे। हमारे पास तीन गाडिया भी हैं।"

फुक्कन मिया अपनी कुर्सी स उठते हुए बोले, "लकिन बेटे, जरा साच लो। वो तो मैले कुचले लोग होगे। बेघरबार, सडका और पटरिया पर रातें काटन वाले। मन्त्री साहब नाराज न हो जाए।"

"अजी नहीं," वह लडका बोला, 'यही तो असली जनता है। मन्त्री जी खुश होगे।"

"और सिपाही तो नहीं रोकेंग ?' फुक्कन मिया न अपना सबसे बडा डर प्रकट किया।

"बाबा, मैं जो साथ हू। आप चिंता मत करो। बस जल्दी स चले चलो।"

करीम मिया ने दोना को लिफ्ट से नीचे उतारा। लिफ्ट म निकलकर फुक्कन मिया नौजवान लडके के साथ मजबूत कदमो से मखमली गलीचे पर चलने लगे। फुक्कन मिया को इस बात पर हैरत हो रही थी कि वह बिना किसी का सहारा लिए मखमली गलीचे पर चल सकते है। अब उनके पाव गलीचे पर फिसल नहीं रहे थे और न उन्हें गलीचे के गन्दा हो जान का डर लग रहा था। मन्त्री की प्रतिष्ठा बचाने की और देश की नाक को ऊचा रखने की जिम्मेदारी ने उन्हें अपने कुछ होने का एहसास करा दिया था।

सडक पर आकर दोनो एक गाडी मे बैठ गए। गाडी घरघराकर चल दी। उनके पीछे दो खाली गाडिया भी दौडन लगी।

पाच मिनट के अन्दर अन्दर तीन गाडिया पचास-साठ मर्दों, औरतो और बच्चो को लेकर पहुच गइ। मर्द अधिकतर लुगी बनियान पहने हुए थे। कुछ धोती कमीज और सिर पर मैला सा साफा पहने हुए थे। औरतें अधिकतर घाघरे पहने हुए थी—व सडको के किनारे पत्थर कूटने वाली मजदूरिनें थी।

मैले कुचैले और फटे पुराने कपडो वाली उस भीड को देखकर पुलिस के सिपाही अपने डडे सभालने लगे, लेकिन नौजवान लडके ने जब उन्हें अ दर चलने का इशारा किया तो सिपाही एक तरफ हो गए। तब तक तीन गाडिया वापस चली गई थी और पाच मिनट मे मजदूरा की एक और खेप भरकर ले आई। नौजवान लडका उन सब लोगो को बडे आदर स अ दर ले जा रहा था। करीम सबको लिफ्ट पर चढाकर हाल मे पहुचाने लगा। फुक्कन मिया हाल मे खडे खडे सबको बैठने की हिदायतें द रहे थ। दफ्तर की गाडिया पटरी पर सोने वाले लोगो को भर भरकर ला रही थी।

पन्द्रह मिनट म हाल की सब सीटें भर गइ। गाडियो मे मजदूरो की जो आखिरी खेप आई उन्ह सिपाहिया ने बाहर रोक दिया क्योंकि मत्री जी की गाडी आ गई थी और हाल खचाखच भर गया था।

खुमारी

मलेरिया के उन्मूलन की सचाई पर जब बरकतराम को कई वर्षों के तजरबे के बाद विश्वास हो गया तो उन्होंने मच्छरदानी की मद को घर की पचवर्षीय योजना से खारिज कर दिया। बचपन में उन्हें मलेरिये के बुखार ने जिस तरह जकड़ा था, उसकी याद उनके मन में ताज़ा थी। तब वह पांचवीं में पढ़ता था और घर से चौदह मील दूर बोर्डिंग हाउस में रहता था। उसे इतना याद है कि जब बुखार से उसका शरीर कांपने लगता और उसके दांत बजने लगते थे तो उसे बोर्डिंग हाउस की प्लस्तर निकली दीवारों पर यम के डरावने दूत हाथ में शूल लिए दिखाई देते थे, या सांप कुंडली मारकर बैठे हुए दीखते थे। लेकिन उसके दोस्त बुखार उतरने पर उसे बताते थे कि वह बुखार में अटशट बोलता था और वहां यम के दूत या सांप जैसी कोई चीज़ नहीं होती थी।

लेकिन बरकतराम के मन में बचपन का डर बुढ़ापे के करीब आने पर भी बैठा रहा। वर्षों तक वह घर के सभी पांच सदस्यों के लिए पांच मच्छरदानियां खरीदने की योजना बनाता रहा और इसके लिए वार्षिक वेतन वृद्धि या 'ओवरटाइम' से पूंजी जुटाने का निश्चय करता रहा। लेकिन घर के खर्चों में जिस तेज़ी से बढ़ोतरी होती गई उसमें मच्छरदानियों की मद को हमेशा अगले वर्ष के लिए टाल देना पड़ता था। मलेरिया उन्मूलन की सचाई के कारण मच्छरदानियों की मद से उसका पीछा छूट गया और उसने राहत की सांस ली।

लेकिन मलेरिया तो दफ्तरों की फाइलों में छिपा बैठा था। मौका पाते ही पूरे जोश के साथ बाहर निकल आया। बरकतराम की आर्थिक स्थिति क्लर्क से सेक्शन अफसर बन जाने के बावजूद इतनी खस्ता हो

चुकी थी कि पाच मच्छरदानिया खरीदने की बात मन मे लाना भी उसे अहमकपन लगता था।

चूंकि मच्छरों से अब कोई बचाव नही था और किसी भी समय किसी को मलेरिया हो सकता था, इसलिए जब उस दिन बरकतराम को दफ्तर मे बैठे बैठे ठंड सी लगी और बुखार सा लगने लगा तो वह फौरन सामने की बिल्डिंग मे मलेरिया सेंटर मे खून टेस्ट कराने पहुच गया।

मलेरिया सेंटर के इन्चार्ज डॉ० गुप्ता से उनका अच्छा परिचय था। सोचा जल्दी दवाई मिल जाएगी। एक बाबू ने रजिस्टर मे उनका नाम चढाया और उनकी उगली मे सूई चुभोकर स्लाइड मे खून का सैम्पल ले लिया। इसके बाद डॉक्टर ने उसे चार गोलिया वही खिला दी और चार घर के लिए दे दी। छ छ घटे बाद दो दो गोलिया खानी थी और दूसरे दिन रिपोर्ट के लिए आना था।

उस दिन बरकतराम दफ्तर से छुट्टी लेकर जल्दी घर चला गया। जब तक वह बसो मे धक्के खाता घर पहुचा बुखार बस मे पसीना आने मे उतर चुका था लेकिन उसके कान बद हो चुके थे और सिर जैसे घने बादलो से ढक गया था। आसमान जब कभी घने बादलो मे ढक जाता था और उसमे एक भी नीला दाग नजर नही आता था तो उसे सब कुछ डूब जाने की सी अनुभूति होती थी। कुछ उसी तरह की अनुभूति उसे अब हो रही थी और लगता उसकी खोपडी के अदर कोई विचार कोई एहसास नही बचा है।

शाम को डॉक्टर के कहे अनुसार उसने दो गोलिया और ले ली। अनिच्छा के बावजूद थोडा सा खाना खाया और छत पर खाट डालकर सो गया।

अभी मुश्किल मे आठ बजे थे। पत्नी सरला ने उसके लिए खिचडी बनाई थी। बच्चे भी खिचडी बहुत पसन्द करते थे इसलिए घर मे सबके लिए खिचडी और टमाटर का सूप तथा चटनी बने थे। बडे लडके दीपू की बी० ए० की परीक्षाए चल रही थी और वह रात देर तक पढता था। हल्का भोजन खिचडी उसके लिए ठीक था। छोटे लडके रवि की बारहवी की परीक्षाए हो चुकी थी और आजकल वह लायब्रेरी से नॉवल लाकर बडी

देर तक उन्ह चाटता था। लडकी सरिता कमजोर-सी थी और अक्सर बीमार रहती थी। याने आजकल तीनो बच्चा के लिए खिचडी आदर्श भोजन थी। हा, कुछ दिन स घर मे दूध की मात्रा बढानी पडी थी। कमजोर लडकी के अलावा परीक्षा देन वाले बच्चे को रात एक गिलास दूध निहायत जरूरी था, इसलिए पिछने महीने स एक किलो दूध का खच बढ गया था। अब चूकि एक बच्चे की परीक्षाए खत्म लकिन दूसरे की शुरू हो गई थी अत दूध के खच म कमी करने की कोई सभावना नही थी।

खाट पर लेट लेटे बरक्तराम एक किलो दूध के फालतू खच पर विचार करते हुए कुछ भावुक हो उठा। उसे अपनी जिदगी की मजबूरिया की याद सतान लगी। यह क्या कमीनी जिदगी उसन अब तक बसर की! सूखी डबलरोटी चाय के साथ निगलकर बच्चे स्कूल जाते रह। हर नये साल पर वह एकात मे बैठकर योजनाए बनाता था कि बच्चा को दूध, डबलरोटी मक्खन और एक अडे का नाश्ता देना जरूरी है। दो अढाई बजे तक सूखी चाय और डबलरोटी के सहारे वे कैसे रहते होंगे? फल घर म कभी तीज-त्योहार के दिन आते हैं और बच्चा को चखने भर को मिलत हैं। मारी जिदगी ढग के नाश्ते के लिए सघष करते बीत गइ। पत्नी के लिए पच्चीस रुपये म सत्तर रुपये तक की साडी से आगे जान का कभी साहस नही हुआ। सोन का कोई गहना बनाने का तो सवाल ही नही। खुद अपन लिए वह क्या कर पाया। चप्पल के एडी वाले हिस्स म घिसाइ के कारण चद्रग्रहण का नक्शा बन गया है लेकिन पिछले छ महीन स वह उसी चप्पल को घसीटे चला जा रहा है।

फिर उसे लगा कि इन सब बाना को सोचना व्यथ है। इन तमाम अभावा के बावजूद वह लाखा करोडो लोगो की तुलना मे बहतर स्थिति मे है। उसके बच्चे भूखे नही सोते, चिथडे नही पहनत। उनकी शिक्षा नही रुकी। गुजारेलायक मकान है जिसका किराया वह जैस तैसे दे रहा है। कितन लोग हैं इस देश म जिन्हें ये सुविधाए मिलती है?

और कितने लोग हैं इस देश मे जो यह सोचते हैं कि उनसे ज्यादा बदकिस्मत लोग इस देश मे या इस दुनिया मे हैं? क्या इस तरह से

सोचना जिंदगी म कुछ नही है ? अपने लिए तो कौवे कुत्ते भी मोचते हैं। दूसरो के साथ अपनी किस्मत को जोडकर जिंदगी बिताने का साहस कितने लोगा म होता है ? आदमी की जिंदगी का अगर यह अथ नही है, तो फिर क्या है ?

वह चाहता तो अपन लिए क्या नही कर सकता था। जिन जिन दफ्तरो और विभागो म उसने काम किया है वहा अपनी किस्मत को सवारने की कोई कम सभावनाए नही थी। उसके कितने ही साथिया न घूस के रुपय से कोठिया खडी की हैं। उसीके सक्शन का बिल क्लक एक दिन राजदूत मोटरसाइकिल पर और एक दिन एम्बेसडर कार पर बठकर आता है। उसके एक सहायक का ड्राइगरूम राजा महाराजाओ के ड्राइग रूम की तरह सजा है। मकान के प्लाट तो लगभग सबके पास है। वह चाहता तो उसक पास भी सब कुछ हो सकता था। लकिन तब यह जिंदगी कौवा कुत्तो की तरह होती। तब उसम कुछ अथ नही होता। जिंदगी का सही अथ आगे बढना ह लकिन किसी के पट पर पाव रखकर नहीं, सब को साथ लेकर आगे बढना है।

जिंदगी के इस सही अथ की खोज कर लेन स बरकतराम को बहुत सतोष मिला। मन की अनक ग्लानिया जैस धुल गइ और उसे एक एसी मानसिक शाति की अनुभूति हुई जो बच्चे को मनचाहा खिलौना मिल जाने के बाद होती है।

उसन दखा पत्नी और बच्चे उसकी अगल बगल अपनी अपनी खाटें डालकर सो गए थे। शायद रात काफी बीत गई थी। वह पानी पीन के लिए उठा तो पत्नी पास की खाट स बाली 'खाट के नीचे दूध रखा है पी लो। कुनीन की गोलिया गरमी करती है। बरकतराम न बच्चा की जरूरत म बचाया गया एक कप दूध चुपचाप पी लिया और फिर आखें बद करके लेट गया। यह सोचकर उसकी आखो म आसू आ गए कि यह एक कप दूध बच्चो न अपन हिस्स स उसके लिए बचाया है। बच्चा के लिए उस जो कुछ करना चाहिए था, उस वह नही कर सका। फिर भी बच्चे उस प्यार करत हैं यह क्या कम है ? य उसस नफरत भी कर सकते थे। सच बात तो यह है कि जिस ढग स उसन उन्ह पाला है जिन अभावो

से होकर उन्हें गुज़रना पड़ा है, उन्हें देखते हुए बच्चे यदि उससे नफरत करते तो ज्यादा स्वाभाविक होता। ठीक है बड़ा लड़का बी० ए० कर रहा है। दो साल बाद एम० ए० भी कर लेगा और मेरे रिटायर होने तक चाहे तो पीएच० डी० भी कर सकता है। छोटा लड़का भी जहा तक चाहे पढ़ सकता है। लेकिन पढ़ाई के बाद क्या होगा ? क्या उन्हें कोई नौकरी मिलेगी ? कोई काम मिलेगा ? उसकी अपनी सनक ने उन्हें कही का नही छोड़ा। कार्पोरेशन के स्कूलो मे और सरकारी स्कूलों मे हिंदी के माध्यम से बच्चो को पढ़ाकर उसने उनके साथ सबसे बड़ी दुश्मनी की। नौकरिया जहा भी मिलती हैं अग्रेज़ी वालो को मिलती हैं। लडके पढने लिखने मे अच्छे हैं, उससे क्या होता है ? नौकरिया तो सिफारिश से मिलती हैं घूस से मिलती हैं और अग्रेज़ी से मिलती हैं। अगर वह बच्चो को जस तैसे पब्लिक स्कूलो मे पढ़ाता तो उनका भविष्य उनके लिए रंगीन बनता।

लेकिन तब ज़िंदगी को अर्थ कहा मिलता ? उन उसूलो और उन विश्वासो का क्या होता जिन्हें ज़िंदगी की लड़ाई मे हमेशा सीने से लगाए रखा ? यह ठीक है जिसे हम आज़ादी कहते रहे वह आज़ादी नही निकली—सिर्फ शासन करने वालो की चमड़ी का रंग बदला। दो नंबर के नवाब जो पहले थे आज भी हैं, सिर्फ टोपी बदल गई है। गोलियां लाठियां और बूट की ठोकरों की भाषा मे बात करने वाली पुलिस भी वही है। गरीबी वही, भुखमरी वही, भिखारी वही, लाचारी वही, फिर हुआ क्या ? बदला क्या ? तो क्या बदलाव की बात सोचना एक नई दुनिया का स्वप्न देखना निरा पागलपन था ?

लेकिन ये बच्चे इन बातो को कैसे समझेंगे, क्यो समझेंगे ? वे तो सिर्फ इतना देखेंगे कि बाप ने अपनी मूर्खता के कारण उन्हें ऐसी भाषा मे शिक्षा दी जो बाज़ार मे खोटी थी। और तब उन्हें अपने बाप से नफरत करने का पूरा अधिकार होगा।

एक क्षण के लिए बरकतराम इस कल्पना से कांप उठा। उसे लगा कि वह बेकार की बातें सोचे चला जा रहा है। जब से वह छत पर आकर लेटा था, उसके दिमाग मे ये बेकार की बातें उठ रही थी, एक सिलसिले मे। ऐसा तो पहले कभी नही हुआ था। उसने अनुमान लगाया कि पिछले

चार पाच घटो से वह इसी तरह के खयालो म उलझा रहा है। ग्रास पास की खाटो पर बच्चे गहरी नीद सो रहे थे। पत्नी भी ग्रब नीद म थी। न जाने कितनी रात बीत चुकी थी। बीच बीच म कुत्ता के भौंकने की ग्रावाज सुनाई दे जाती थी, लेकिन उससे समय का ग्रनुमान नही लग सकता था। उसकी इच्छा हो रही थी कि वह नीचे जाए ग्रौर ताना खोल कर घडी म समय देख ग्राए। लेकिन तभी रेलगाडी की चीख सुनाई दी ग्रौर उसके बाद पाच छ मिनट तक रेल के डिब्बा के पटरो पर लुढकने की खट खट ग्रावाज कानो को भरती रही। दात भीचकर उसने उस ग्रावाज का बर्दाश्त किया। लेकिन गाडी की ग्रावाज से उसने ग्रनुमान लगाया कि रात के दो बजे हैं। वह पिछले छ घट स लगातार इसी तरह ग्रपने से बतिया रहा था। यह उसे क्या हो गया है ? उसे नीद क्या नही ग्राती ?

उसने उठकर पानी पिया। हाथ पैर धोए। मुह पर भी पानी छिडका ग्रौर फिर नीद लेने के पूरे इरादे के साथ चादर ग्रोढकर सो गया। उसने ग्राखें मीच ली ग्रौर दृढ निश्चय कर लिया कि वह किसी खुराफात को दिमाग मे नही ग्राने देगा, बस नीद का ध्यान करेगा।

उसे लगा कि ग्राज उसे नीद नही ग्राई तो सुबह तक वह पागल हो जाएगा। कोई भी ग्रादमी पागल होना नही चाहता। लेकिन ग्रगर वह उन सब बाता को सोचेगा जो उसे मनुष्य होने के नाते सोचनी चाहिए, तो वह जरूर पागल हो जाएगा। शायद इसीलिए ग्रादमी तरह-तरह की नीदो की ईजाद करता है ताकि वह जिंदगी की वास्तविकताग्रो को भूलकर ग्रपने को पागल होने से बचा सके। वह नीद की गोलियों की ईजाद करता है नशे की वस्तुग्रो की ईजाद करता है ईश्वर ग्रौर धर्म की ईजाद करता है, झूठ ग्रौर बेईमानी की ईजाद करता है। ग्रपने को पागलपन स बचाने के लिए वह उन तमाम समझौतो, फरेबो ग्रौर पाखडो की ईजाद करता है जिन्हे वह सद्गुण कहकर प्रचारित करता है। जगत गति के इस प्रचण्ड ग्राघात स ग्रपने को सुरक्षित रखने वाला ग्रादमी ही शायद सही मायनो मे सफल ग्रादमी है। शायद इसीलिए जिन्हे जगत गति व्यापी जिन्होने पागल होने के डर से सोचना बन्द नही किया जो इस बदसूरत दुनिया को सुन्दर बनाने के लिए नीद म लडते रहे ऐसे तमाम व्यक्ति ग्रसफल हुए। वे या

तो सूली पर टाग दिए गए या जहर देकर मार दिए गए, या गोली से उडा दिए गए या पागल करार दिए गए या जेलो म ठूस दिए गए या

उसका कण्ठ रुद्ध हो गया। आखो म आसू भरने लगे। उसे लगा कि वह खुद सुकरात, क्राइस्ट और दूसरे शहीदो की पक्ति मे खडा है जिन्होने नींद से लडाई लडी थी। शायद इस बात को जब मेरे बच्चे समझने लगेंगे तो वे मुझम नफरत नही करेंगे। जब वे यह जानेंगे कि मैंने उन उसूलो पर चलने की कोशिश की थी जिन पर चलकर सब एकसाथ आगे जा सकते हैं, तो शायद वे मुझे क्षमा कर देंगे।

इस विचार के आते ही उसका मन काफी हल्का हो गया। उसका ध्यान कानो मे हो रही सन् सन् की आवाज की तरफ गया। शायद उसके कान खुल गए थे और हवा उनम बिना रोक टोक प्रवेश कर रही थी। कानो की सन् सन् आवाज उसे खोपटी के भीतर घुसती हुई भी लगी। एक क्षण तो उसे लगा कि समाधि मे योगी को जो अनहद नाद सुनाई देता है वह ऐसा ही होता होगा। आखिर समाधि एकाग्रचित्त स ही तो प्राप्त होती है। लेकिन दूसरे ही क्षण वह अपनी इस बतुकी कल्पना पर हस दिया। यह सन सनाहट कुनीन की गोलिया की है बहुत खुश्की करती हैं। जितनी गोलिया उसने खाई थी उन पर कम से कम एक किलो दूध तो पीना ही चाहिए था। एक गिलास मतर मौसमी का रस भी होता तो और भी अच्छा था।

रेलगाडी की चीख फिर सुनाई दी और उसके साथ डिब्बा के लुढकने से होनेवाली खट खट की आवाजो को वह गिनने लगा। इस गाडी की चीख पहली गाडी की चीख से काफी भिन्न थी, डिब्बा के लुढकने की स्पीड भी धीमी थी और कुछ कुछ सैकेंड के बाद होने वाली खटाक की आवाज यह बता रही थी कि मालगाडी गुजर रही है। यह गाडी साढे चार बजे गुजरती थी। कई बार बरकतराम की नींद इस गाडी की आवाज से टूटी थी और वह फिर सो नही सका था। ऐसे मौको पर वह डिब्बा के लुढकने की आवाजो को गिनने लगता था यह जानने के लिए कि खटाक खटाक की आवाजें सौ से ऊपर जाती हैं या नही। आदत के अनुसार उसने आज भी गिनना शुरू किया। एक दो तीन चार पाच छ और इसी तरह तीस बत्तीस तक पहुचने के बाद उसे लगा कि वह फिर बेकार

की बाता मे मन को उलझाए जा रहा है। यदि खट् खट् की आवाज सौ से अधिक बार सुनाई भी दी, तो कौनसी क्राति हो जाएगी या कौनसी प्रलय हो जाएगी ? हा, इतना जरूर होगा कि जिस नीद को लाने की वह इतनी कोशिश कर रहा है, वह और दूर हो जाएगी।

अब भी वह नीद का ध्यान करे और इन बेकार की बातो को सोचना ब द कर दे तो वह दो घटे नीद ले सकता है। दो घटे की नीद भी बहुत होती है। आधे घटे की नीद भी मेरे लिए इस समय बहुत होगी। किसी तरह, कुछ देर के लिए ही सही, मेरे दिमाग से यह खुराफात निकल जाए तो मुझे शाति मिलेगी। शाति जीवन की सबसे बडी उपलब्धि है। हमारे दशन शास्त्र शाति को अपना अतिम लक्ष्य कहते हैं। विश्व की सारी सरगरमिया शाति को लेकर चल रही है। शाति के लिए घातक अस्त्रो के अम्बार इकटठे किए जा रहे है। शाति के लिए जासूसी सगठनो के शिकारी कुत्ते चप्पा चप्पा धरती को सूघ रह हैं। शाति के लिए निहत्थे और बेबस लोगा को भेड बकरियो की तरह मारा जाता है। दुनिया मे करोडा मनुष्यो को भूख बीमारी से मरने के लिए इसीलिए मजबूर किया जाता है ताकि वे कुछ लोगा की शाति को भग न करें। यह बाबाओ और धमगुरुओ की दुकानदारी इसीलिए गरम है कि लोग शाति के भूखे हैं। यह शाति एक कमोनी चीज है। आदमी को अपनी आदमियत छोडे बिना शाति नही मिलती। मुझे नही चाहिए ऐसी शाति। मुझे नही चाहिए यह नीद। मैं जिंदगी के एहसास को छाती मे भरकर जीना चाहता हू।

वह बिस्तर से उठ गया। कही दूर से उसके काना मे कौवे की काव काव सुनाई दी। बस की घरघराहट भी सुनाई दी। पास किसी रिक्शा स्कूटर वाले ने स्कूटर स्टाट किया और उसकी भड भडाहट उसे बहुत अच्छी लगी। नीचे उतरकर उसने कमरा खोला और बत्ती जलाई। दरारा और छेदो से बाहर निकलकर कमरे मे निभय घूमनेवाले तिलचटटे भागकर फिर दरारा और छेदो म जा छिपे। उन्हें रोशनी मे बेतहाशा भागता देख कर उस हसी आ गई। उसने कुर्ता-पाजामा पहना, पाव मे चप्पल डाली और घूमने चल दिया।

बगीचे मे टहलते-टहलत उसने बहुत से अधेड, जवान और बच्चा को

योगासन करते, डंड-बैठक पलते या भागते हुए देखा। उसे लगा कि इन सबके लिए यह ज़िन्दगी कितनी सुन्दर है, कितनी कीमती है बावजूद उन सब बातों के जो उसके दिमाग म रात भर घूमती रहीं।

बरकतराम सैर करके लौटा तो पत्नी को परेशान पाया।

"कहा चले गए थे सुबह सुबह ?"

वह मुस्करा दिया, 'यू ही सैर करने निकल गया था।"

"रात नींद तो ठीक आ गई थी ?"

"हा।'

"आज डॉक्टर के पास जाकर रिपोर्ट ज़रूर ले लेना।"

'हा वह तो लेनी है।"

उस दिन दफ्तर पहुचते ही बरकतराम डॉक्टर के पास गया। डॉक्टर ने रिकाड देखकर बताया कि उसे मलेरिया नही है। कुछ रुककर उन्होने पूछा—

'कितनी गोलिया खाई थी ?"

"छ खा ली थी। दो अभी बची हैं।"

"कोई बात नहीं। उन्ह मत खाना। दो दिन दूध ज्यादा लो। छ गोलिया खाई नुकसान नहीं करती। तुम्हारे जैसे लोगो के लिए, जिन्हे सोचने की बीमारी है खुमारी भी मजेदार होगी।"

बरकतराम मलेरिया सेंटर से निकलकर अपने दफ्तर की तरफ चला तो वह मुस्करा रहा था, यह सोचकर कि जो खुराफात रात भर उसके दिमाग म चलती रही वह मात्र खुमारी थी।

अजीब लोग

अभी वह स्कूल से लौटता ही होगा। गलियारे में बड़े थानेदार की तरह बूटों की 'कटक कटक' करता हुआ आएगा। दरवाज़े पर आकर ज़ोर से पाँव फोड़ेगा और फिर तीन चार मुक्के चौखट पर मारेगा। ज़ोर के धक्के से कपाट का दीवार से टकराकर भीतर आएगा। आते ही रेडियो का बटन खोल देगा। फिर किताबें मेज़ पर पटककर बूटों के तसमे खोलने लगेगा। रेडियो गरम होने तक वह तसमों में उलझता रहेगा क्योंकि उनमें गाँठ पड़ी होगी। फिर वह झटके से तसमा तोड़कर रेडियो पर लपकेगा। पक्के गाने की आवाज सुनकर वह 'हत्तेरे की' कहेगा, फिर सूई घुमाकर फिल्मी गीत लगाएगा और आवाज़ के साथ साथ खुद भी गाने लगेगा।

पिताजी को इन गानों से चिढ़ है। वे भी अजीब हैं। इतने अच्छे गाने तो होते हैं फिल्मों में। शादियों में भी यही गाने बजाए जाते हैं।

लेकिन पिताजी को तो बस पक्के गाने चाहिए। फिल्मी गीत हों तो बस सहगल के, बाकी सब बेकार।

एक दिन नीरज ने कह दिया "सहगल की आवाज़ तो बड़े बाजे में भांपू जैसी लगती है। किशोर कुमार की आवाज़ कितनी मीठी है!"

बस पिताजी नाराज़! कुछ बोले तो नहीं, लेकिन मुंह इस तरह बनाया जैसे कड़वी चीज़ मुंह में चली गई हो। बाद में नीरज से कहने लगे तुम इतने बड़े हो गए हो। अच्छे बुरे की पहचान तो तुम्हें होनी चाहिए।

यह भी कोई बात हुई? जो चीज़ अच्छी लगे वही तो अच्छी है। किशोर कुमार का गाना है न, किसे अच्छा नहीं लगता! अभी रेडियो

पर आने लगे तो गुमसुम बैठी ललिता के पैर धुन के साथ-साथ थिरकने लगें। नीरज तो उसे सुनते ही सारे काम छोड़कर नाचने लगता है।

लेकिन गाना का मजा तभी आना है जब रेडियो ऊंची आवाज से बजे।

जाने क्या मां को ऊंची आवाज अच्छी नहीं लगती। झट आकर आवाज कम कर देती हैं। भला मरी मरी-सी आवाज में गाना क्या अच्छा लगता है?

नीरज मुझे 'मैनजर' कहकर छेड़ता है तो मुझे गुस्सा आता है। यह तो ठीक है कि 'म' से मजु बनता है और 'म' से मैनजर। इसलिए मैनेजर मेरी छेड़ हुई। लेकिन यह भी क्या बात कि मुझे मैनजर कहकर ही छेड़ा जाए। म से और भी शब्द बनते हैं। मछली कहे मूंगफली कहे लेकिन मैनजर क्या हुआ? इसका कोई मतलब भी है?

छेड़ का जवाब मैं छेड़ से दे सकती हूं। नीरज की छेड़ है—नकटा नकूड़ा, खिखट्टू लेकिन उसके सौ नाम दो तब भी उसे गुस्सा नहीं आता है। हंसता रहता है। इसीलिए तो छेड़ का जवाब छेड़ से देना बेकार हो जाता है।

लेकिन मुझे गुस्सा तो निकालना होता है। कोई मुझे छेड़े और मैं चुपचाप गुस्सा पी जाऊं यह कैसे हो सकता है? जब मुझसे कुछ नहीं बन पाता तो कह देती हूं, 'बैठा रह आराम से, नहीं तो ऐसा मुक्का मारूंगी कि तुम लम्बू और जोकर के पास पहुंच जाओगे।'

यह छेड़ का सही जवाब है। अपने दोस्तों का मजाक वह नहीं सह सकता। वह झट मजाक बन्द कर देता है और दांत तोड़ने की धमकियां पर उतर आता है।

एक बात है, उसने कभी मेरे दांत नहीं तोड़े। धमकियां देता है लेकिन हाथ नहीं उठाता। बड़ा गुस्सा आता है तो हल्के से बांह मरोड़ देता है।

लेकिन ललिता तो चटाक चटाक थप्पड़ मारती है। पहले ऐसी नहीं थी वह। कुछ दिन से बदली है उसकी आदत। बड़ी चिड़चिड़ी हो गई है। उसे नई सहेलियां जो मिल गई हैं। चार पांच हैं। जब मिलती हैं तो बड़ी खुसर पुसर बातें करती हैं और बीच बीच में हंसती जाती हैं।

कल शाम वे बरामदे के कोने मे खडी थी। मैंने सोचा, मैं भी उनकी बातें सुनू लेकिन ललिता ने छूटते ही मुझे चाटा जड दिया।

थोडी देर बाद वह मा की साडी पहनकर सहेलियो के बीच पहुची। एक एक को पूछने लगी, "मुझे कैसी लगती है साडी ?" सबने उसकी तारीफ की। बेला ने कहा, "बिलकुल नई बहू लग रही हो।" और उसने गाल मे हल्के से चिहुटी काट ली।

कमलेश कुमारी न उसके गले मे बाह डालकर कहा, "हाय कितनी प्यारी लग रही हो!"

मुझे तो चाटे की याद थी। मैंने कहा, "टुनटुन लग रही हो।"

गुस्से से लाल पीली होकर वह मेरी तरफ दौडी, लेकिन साडी टागो मे फस गई और धडाम से गिर पडी। सच कहती हू मुझे बडा मजा आया।

लेकिन वह मजा ज्यादा देर नही रहा। ललिता न मेरा बस्ता खोल कर ड्राइग की फाइल निकाल ली। उसने मेरे लिए जो-जो चित्र बनाए थे, सब निकाल लिए। उसकी जो पुरानी पुस्तकें मेरे पास थी वे भी देनी पडी। मेरा बस्ता खाली हो गया। दूसरे दिन स्कल मे मेरी कितनी पिटाई होगी यह सोचकर मेरा तो दिल बैठ गया। लेकिन नीरज ने आकर मेरी रक्षा कर ली। उसने ललिता को धमकी दी कि वह ललिता से अपने चित्र और पुस्तकें वापस ले लेगा, तब कही उसने मेरी चीजें लौटाइ।

नीरज की बात तो समझ मे नही आती। कभी तो बहुत अच्छा बन जाता है और कभी बागी भालू की तरह डराता धमकाता है। कल्पना की कहानी मे मुझे बागी भालू ही सबसे अच्छा लगता है।

मा एक दिन पिताजी से कह रही थी, "नीरज बागी होता जा रहा है।" मैंने सोचा—बागी होने मे क्या बुराई है! बागी भालू भी तो बागी था। वह राजा शेर या मन्त्री हाथी की आज्ञा को नही मानता था, लेकिन था तो बुद्धिमान।

नीरज तो पागल है। जिस काम स रोको, वह काम जरूर करता है। पिताजी कहते हैं, खुली सडक पर साइकिल मत दौडाया करो। नीरज साइकिल से बस को छूने की कोशिश करता है। अपन दोस्त का स्कूटर तो इतना तेज चलाता है कि क्या कहू।

एक दिन मुझे 'चड्डी' खिलाने ले गया। मुझे लगा, मैं हवा मे उडती जा रही हू। उसके बाद मैंने कान पकडे कि कभी उसके साथ स्कूटर पर नहीं बैठूगी।

एक दिन वह दोस्तो के साथ रात का फिल्म शो देखने चला गया। पिताजी बहुत गुस्से हुए। जब तक वह नही लौटा वे भी बरामदे मे इधर-उधर चक्कर लगाते रह। रात को एक बजे वह लौटा, तो पिताजी ने उसे वह डाट पिलाई कि वह कभी नही भूलेगा।

मुझे तो कुछ पता नही चला। मैं तब तक सो गई थी। लेकिन दूसरे दिन नीरज मा से बडे गुस्से मे कह रहा था "मैं किसी की परवाह नही करता। मैं दोस्तो के साथ फिल्म देखने जाऊगा और जरूर जाऊगा। देखता हू मुझे कौन रोकता और कैसे रोकता है? खुद तो रात के दस दस ग्यारह ग्यारह बजे तक बाहर रहकर मजे उडाते हैं और हमे कहते हैं—यह मत करो, वह मत करो। क्या मैं दोस्तो के आगे बुद्धू और डरपोक बनू?"

उसके बाद वह कई दिनो तक पिताजी के सामने नही गया। उनके घर लौटने से पहले ही वह खा पीकर सो जाता और सुबह उनके उठने से पहले ही स्कूल चल देता।

एक बार स्कूटर चलाते समय उसका एक्सीडेंट हो गया। उसके हाथ, पाव और सिर पर अनेक चोटें आई। मा घबराकर रोने लगी। ललिता ने पिताजी के दफ्तर मे टेलीफोन करके उन्हे घर बुला लिया।

मैंने सोचा—पिताजी बहुत घबरा जाएगे या नीरज को झाड फटकार सुनाएगे। लेकिन वे न तो घबराए और न उन्होने नीरज को डाटा। बस मुस्कराकर बोले, "कोई बात नही। मामूली चोट है।"

मा ने कहा, "इसे अस्पताल ले जाओ।"

वे बोले, "इसकी क्या जरूरत? जरा टिंचर आयोडीन लगा दो। दो दिन मे ठीक हो जाएगा।" और वे फिर दफ्तर चले गए।

सच पूछो तो उस दिन मुझे भी बहुत बुरा लगा। पिताजी भी कितने अजीब आदमी हैं। नीरज को इतनी चोट लगी और उन्होने जरा भी परवाह नहीं की। शायद उन्हे किसी की परवाह नहीं, वे किसी को प्यार

नहीं करते। क्या हो गया है उन्हें ?

मा कितनी अच्छी हैं। उस दिन मुझे ज़रा सी चोट लगी थी तो वह रो पडी थी।

एक दिन नीरज दोस्तो के साथ नई फिल्म देखने गया। वापस आया तो उसकी आखें लाल हो रही थी। मैंने पूछा, "फिल्म कैसी थी ?" उसने कहा, बहुत अच्छी थी।' मैंने जिद की कि फिल्म की कहानी सुनाओ।

फिल्म की कहानी सुनने का मुझे बहुत शौक है। मुझे ही क्या, सभी को है। ललिता को पता चला तो वह भी कहानी सुनने की जिद करने लगी। ललिता की दो सहेलिया भी आ गइ।

नीरज ललिता की सहेलियो से ,बडा झेंपता है। वह यहान ढूढने लगा। लेकिन जब सबने जोर डाला, तो उसे कहानी सुनाने के लिए बठना ही पडा। शाम का वक्त था। हम बाहर बरामदे म बठ गए।

कहानी थी एक आदमी की, जो रात रात भर क्लबो और जुआघरो मे रहता था। शराब पीता था जुआ खेलता था, लडकियो के साथ डास करता था। घर मे पत्नी को पीटता था, बच्चो को डाटता था। उसकी पत्नी बच्चो को लेकर घर से निकल जाती है और बडी मुश्किल से दिन बिताती है।

बहुत बुरी कहानी थी। सुनते सुनते मुझे रोना आ गया। नीरज जब उस आदमी की बात करने लगता तो उसका चेहरा गुस्से से लाल हो जाता। दात भीचकर और फुफकारकर वह एसे बोलने लगता जैसे खुद फिल्म में काम कर रहा हो।

पिताजी अभी दफ्तर से नहीं लौटे थे। मा भीतर खाना बना रही थी।

मा को दिन भर कितना काम करना पडता है, इसका पता हम तब चला जब एक दिन मा बीमार पड गइ। पेट म दद, उलटिया, जुलाब, सिर दद और तेज बुखार। एक दिन, दो दिन तीन दिन फिर पूरा एक सप्ताह निकल गया। बुखार नहीं उतरा। तीन चार डॉक्टरो को दिखाया। आखिर पता चला मियादी बुखार हो गया है।

इन सात दिनो म क्या क्या हो गया। पिताजी ने दफ्तर से छुट्टी ले

ली और दिन-भर घर रहकर मा की देखभाल करने लगे। उनका इधर उधर जाना, दोस्तों में हर शाम को गप्पबाजी करना सब बन्द हो गया।

खाना पकाने का काम ललिता के हिस्से में आया। वह सुबह बड़े तड़के उठ जाती। स्कूल जाने से पहले खाना बनाती। स्कूल से लौटकर कपड़े धोती। फिर शाम का खाना।

पहले जब मा उसे जरा से काम के लिए कहती थी तो वह लड़ पड़ती। बड़ी नाराज होती। अब सारा काम करने लगी फिर भी खुश। हम पर रौब झाड़ने का मौका जो मिल गया।

नीरज को भी उसकी आज्ञा माननी पड़ती। उसे बाहर का काम करना पड़ता था। सब्जी लाना, आटा पिसाना, डॉक्टर से दवाई लाना। बिना चू-चपड़ किए वह सब काम करता। ललिता उसपर हुक्म चलाती, कभी डाट-डपट भी करती। वह मन मसोसकर सुनता रहता।

मुझे झाड़ू बुहारू का काम मिला। बरतन साफ करने और कपड़े धोने में ललिता की मदद भी करनी पड़ती।

पिताजी कभी मेरे काम में हाथ बटाते कभी ललिता की मदद करते और कभी नीरज की।

हम चार जने दिन भर काम में लगे रहते, फिर भी कोई न कोई काम अधूरा रह जाता।

और मा ये सब काम अकेले करती थी। है न अजीब बात!

लेकिन सबसे अजीब बात यह कि पिताजी हमे बहुत प्यार करने लगे। वे हमे हसाते कहानी सुनाते। पड़ोस के रेडियो पर फिल्मी गीत लगता तो हमे याद दिलाते। इतना जरूर कहते कि रेडियो हल्की आवाज से चलाना। हमारे काम की तारीफ करते। हमसे गलती हो जाती तो मुस्करा देते। नीरज से स्कूल की बातें पूछते। दोस्तों की बातें करते। लगता वे नीरज के बारे में सब कुछ जानते हैं। नीरज डरते डरते बात करता लेकिन वे मुस्कराते रहते। कोई गुस्सा नही, कोई डाट फटकार नही।

ललिता बदल गई, नीरज बदल गया, पिताजी बदल गए, और मैं? मैं भी तो बदल गई। अजीब बात है। यह सब हुआ कैसे!

पहले मैं मा के साथ सोती थी। अब मा का बिस्तर अलग कमरे में

लगाया गया था। मुझे अलग सोना पडता था। मेरे पास ही नीरज का विस्तर होता है। जब कभी रात को मेरी नीद टूटती तो मैं नीरज से पानी मागती थी। नीरज से इसलिए कि ललिता स मुझे डर लगता था। मैं ललिता से पानी मागती तो वह पहले मुझे एक थप्पड मारती, फिर पानी पिलाती। यह आदत उसकी नहीं छूटती है। फिर जब से वह घर का सारा काम करने लगी है, वह अपने को घर की मालकिन समझती है।

एक रात मैंने पानी देने के लिए नीरज को जगाया। उसने मुझे पानी दिया। मैंने देखा, मा के कमरे म हल्की रोशनी जल रही है। पिताजी अपने बिस्तर पर नहीं थे। नीरज ने पर्दे की झिरी से झाककर देखा—पिताजी मा के बिस्तर के पास बैठे उसका सिर धीरे धीरे दबा रहे थे। नीरज बोला 'पिताजी सोए नहीं ?" मैंने बताया कि वे हर रोज इसी तरह रात भर मा के पास बठे रहते हैं। नीरज चुप हो गया। वह एकटक दूसरे कमरे की ओर देखता रहा और सोचता रहा।

फिर दूसरे कमरे स आवाज आई। दोनो कुछ बातें कर रहे थे। हम कान लगाकर सुनने लगे।

"अब कैसी है तबियत ?"

"आज तो लगता है ठीक हू। नीद भी अच्छी आई। आप साए नहीं ?'

'अभी सो जाऊगा। कुछ जरूरी काम था, कल देने के लिए। मैंने सोचा कर डालू।"

'आप यह शाम का काम छोड क्यो नही देते ? सुबह निकलते हैं और रात को दस ग्यारह बजे घर में घुसते हैं। बच्चो के साथ हसने-बोलने की भी फुर्सत नहीं मिलती। वे न जाने क्या क्या सोचते हैं !"

'लेकिन रजनी, आफिस के बाद पार्टटाईम काम न करू तो घर का सारा खर्च कैसे चलेगा ?'

'जैसे भी होगा, चला लेंगे। यह भी तो सोचो कि बच्चो पर इसका बुरा असर हो रहा है। वे सोचते हैं आप उन्हे प्यार नहीं करते। नीरज एक दिन कह रहा था आप क्लबों मे जाकर मौज उडाते हैं।"

एक क्षण के लिए पिताजी चुप हो गए। फिर बोले "इसमे नीरज का

कोई दोष नही। दोष मेरा है। मुझे उसे सब बातें बता देनी चाहिए थी। खैर, मैं उसे समझा दूगा।"

उसके बाद न जाने क्या हुआ कि नीरज हाथो से मुह ढापकर सिमकने लगा। मैंने पूछा, "क्या हुआ ?" लेकिन उसने कोई जवाब नही दिया। वह सिर से पाव तक चादर लपेटकर सो गया। लेकिन मैं बडी देर तक उसकी हिचकिया सुनती रही।

दूसरे दिन सुबह मैं कुछ देर से उठी तो देखा मा रसोईघर मे चाय बना रही है। ललिता बरतन धोने के बाद फर्श पोछ रही है। पिताजी बिस्तर पर लेटे-लेटे अखबार पढ रहे हैं और नीरज रेडियो की सूई इधर-उधर घुमा रहा है। एक जगह उसने सूई टिका दी और ध्यान से सुनने लगा। बासुरी की धुन बज रही थी और उसके साथ थी तबले की आवाज। मैंने कहा, "नीरज, फिल्मी गीत लगाओ न।"

वह बोला, "ठहर तो। यह धुन सुनने दे, कितनी मधुर लग रही है!"

मैंने सोचा—यह नीरज भी कितना अजीब है!

दीक्षा

मैं जानता था कि उस लड़की के साथ मेरे सम्बन्ध की खबर डॉक्टर सिंह और सभरवाल ने चुस्कियां लेने के उद्देश्य से ही मुझे अपनी महफिल में शामिल किया है। मैं उस प्रसंग को टालने का भरसक प्रयत्न कर रहा था।

डाक्टर सिंह व्हिस्की के दो पैग लेने के बाद उस स्थिति में पहुंच गए थे जहां अक्सर आदमी अपने गुनाहों को कबूलने के लिए संजीदगी का लबादा ओढ़कर हास्यास्पद बनने लगता है। सभरवाल साहब चार पैग ले चुके थे।

डॉक्टर सिंह ने अपने लिए तीसरा पैग भरते हुए कहा—"सभरवाल, सिन्हा हम दोनों से छोटा है। ज़ाहिर है कि हम पर कुछ जिम्मेवारी आयद होती है।'

'तुम क्या समझते हो, हमने जिम्मेवारी निभाने में कुछ कोर कसर उठा रखी है?' सभरवाल ने कहा और मेरी तरफ देखकर चुटकी ली—सच बात तो यह है बेटे की लली पर तुम्हारे हक को मानकर ही हम उस ओर जाने से रुक गए। वैसे वह मुझसे बुरी तरह चिपक गई थी।'

डाक्टर सिंह उसकी बात से चौंक पड़े। हाथ में पकड़ा हुआ गिलास फिर मेज पर रख दिया और बड़े गौर से सभरवाल को देखकर बोले—

'क्या सच?'

तुम्हारी कसम, बड़े गजब का अल्हड़पन है उसमें। सुबह जब मुझसे आटोग्राफ लेने आई इस कद्र सटकर खड़ी हो गई कि मेरा कंधा नरम गोलाई से टकराकर बार बार कांपने लगा।

मैं उसकी साफगोई पर खुश हुआ, बोला "सभरवाल साहब लोगों ने

नाहक शराब को बदनाम कर रखा है। मैं कहता हूं शराब आदमी को देवता बनाती है। वह उसे उन सभी गुनाहों को स्वीकार करने में मदद देती है जिन्हें वह सामान्य जिंदगी में कभी स्वीकार नहीं करता। कितने आटोग्राफ दिए उसे ?'

सभरवाल साहब बोले, "वह तो एक ही दिया जाता है।"

"तो जनाब उसे घण्टे भर अपनी बगल से क्या सटाए रहे ?"

"जी नहीं, मैं तुम्हारी तरह चुगद नहीं हूं। उसने अपनी नोटबुक में मुझसे कुछ मैसेज लिखने के लिए कहा। दो चार लाइनें लिखनी पड़ी।"

मैं अपनी हंसी नहीं रोक सका। इस पर डॉक्टर सिंह बोले 'देखो सिन्हा, हम सभरवाल की सदाशयता पर संदेह करने का कोई अधिकार नहीं है। बर्फ में उनकी घण्टे भर प्रतीक्षा करने के बाद हमने उनके नाम पर लानतें भेजी उसके लिए हमें माफी मागनी चाहिए। बेचारी लड़की को चार लाइनों का संदेश देने में उन्हें व्यस्त रहना पड़ा।

सभरवाल कुछ झेंपे तो डॉक्टर सिंह ने कहा—

'अरे यार! हमारा खयाल तो तुम्हारे बारे में कुछ और ही था। बड़े घुन्ने निकले।"

"और जनाब क्या कर रहे थे कल शाम ?" सभरवाल ने प्रश्न किया।

"कल शाम ? क्यों ?"

मोटरबोट में जब हम सब लोग समुद्र की सैर को निकले थे। नौदिया के साथ डैक पर बैठकर पोगे लिखवाई। आपने अध्यापकीय टेकनीक की व्याख्या करते-करते बेचारी की एक रंगीन शाम की निर्मम हत्या कर डाली।"

डाक्टर सिंह ने जवाब दिया, बोले, 'यार, लड़की बड़ी जहीन है। ऐसे ऐसे प्रश्न करती है कि व्याख्या करते घण्टा बीत जाए।'

"और आप ठहरे सदा मास्टर व्याख्याता" मैंने बीच में ही टिप्पणी की, 'उस मौके का खूब जाते तो कम्बख्ती हो जाती। रंगीन शाम तो रोज ही आती है।"

डॉक्टर सिंह कुछ सकपकाकर बोले, 'सिन्हा, मैं तुम्हारी तरह बेवकूफ तो बन नहीं सकता।'

मैं जानता था कि डॉक्टर सिंह इसी तरह की कोई बात कहेगा। कैमरे और माइक्रोफोन के प्रति अत्यधिक जागरूक होने के कारण व विकट परिस्थितियों में भी मुखौटा चिपकाए रहने के आदी थे। मैंने कहा, 'मेरे और आपके बीच यही तो फर्क है डाक्टर! मैं किसी सुन्दर लड़की के साथ रंगीन शाम को टहलते हुए खूबसूरत माहौल की बातें कर सकता हूं और आप उन लोगों में से हैं जो ज्कौल कालीदास, सुन्दरी के नीवी विध्वंस के बाद अर्धावस्त्रा का दाम पूछने लगते हैं।'

न चाहते हुए भी मेरे मन की कटुता कुछ कुछ प्रकट हो गई। डाक्टर सिंह ने तिलमिलाकर निचले होंठ को दांत से काटा और फिर मेज में गिलास उठाकर गटगट पी गए। थोड़ी देर तक न मैं ही बोला और न मेरे सामने बैठे दोनों दोस्त।

सभरवाल ने तीनों गिलासों में एक एक पैग और भरते हुए कहा, "एक बात तो माननी पड़ेगी। वह है बड़ी बेझिझक। भगवान ने रंग साफ-सुथरा दिया होता तो वह किसी को भी अंगुलियों पर नचा सकती थी। सिन्हा बेटे, सच सच बताओ, तुमने कहां तक प्रगति की ?'

मैं जवाब देने के मूड में नहीं था। मुझे उनकी लिजलिजी बातों में कुछ उबकाई सी आने लगी थी। डॉक्टर सिंह को मौका मिला बोले—

'प्रगति ? लगता है मजनू की ऐसी-तैसी कर देंगे। लौंडों में इनकी चर्चा होने लगी है। याद नहीं कल एक लौंडे ने इसे शूर्पनखा हरण का हीरो बना दिया था। डर यही है कि दानों के साथ साथ घुन भी पिसेगा।'

सभरवाल ने मेरी तरफ देखा "भई यह तो गलत बात है। हम यहां प्रतिष्ठित व्यक्तियों की हैसियत से आए हैं। कम से कम लोगों की नजरों में हमारा व्यवहार ठीक होना चाहिए।"

मैं मुस्कराकर उन दोनों की ओढ़ी हुई बुजुर्गियत को लखता रहा। मुझे उन पर तरस आया। यूनिवर्सिटी के वार्षिक कार्यक्रम में उन्हें प्रतिष्ठित व्यक्तियों की हैसियत से बुलाया गया था ताकि विद्यार्थी उनके जीवन से तथा उनके अनुभवों से प्रेरणा ले सकें। आधी रात के सन्नाटे में गेस्ट हाउस के कमरे में बंद शरीर की तन्त्रियों को शिथिल कर डालने

वाली शराब के नशे में भी वे अपने असली सत्य को, भीतर के खोखलेपन को स्वीकारने के लिए तैयार नहीं थे।

मेरा वहां जाना उस लड़की के कारण ही हुआ था, यह बात मैं अपने दोस्त को पहले ही बता चुका था। उन्हें मेरी बात पर संदेह तो नहीं हुआ आश्चर्य जरूर हुआ होगा क्योंकि उनकी दृष्टि में वह ऐसी नहीं थी जिसके लिए चब्बन घंटे की रेल यात्रा की जा सकती है। किन्तु यह बात बिलकुल सही थी। वैसे प्रोफेसर राम का पत्र, जिन्होंने इस कार्यक्रम का आयोजन किया था, मुझे मिला था, लेकिन मैं उसके उत्तर में अपनी असमर्थता बता चुका था। तभी मुझे उनका पत्र मिला। पत्र से लगा कि उसीने प्रोफेसर साहब को मुझे बुलाने के लिए तैयार किया था। आपसे मिलने का शायद जिन्दगी में यही एक मौका मिले—यही सोचकर मैंने प्रोफेसर साहब से अनुरोध किया था। उनके इन शब्दों ने मुझे अपना निश्चय बदलने पर मजबूर किया था।

प्रोफेसर राम से मेरा बिलकुल परिचय नहीं था, अतः मेरा अनुमान है कि उन्होंने मुझे इसीलिए बुलाया था कि वे जया का अनुरोध टालने में असमर्थ थे। अब तक मैं उसकी इस शक्ति का कायल हो चुका था कि वह अपने अनुरोध को थोप सकती थी और उसका सहृदय पालन भी करा सकती थी।

प्रोफेसर राम को जब पहले मेरी अस्वीकृति का और बाद में स्वीकृति का पत्र मिला, तो उन्हें भी कम आश्चर्य नहीं हुआ होगा। लेकिन यहां आते ही जब मैंने उन्हें बताया कि मैंने जया के आग्रह पर अपने निश्चय को बदला, तो जाने क्यों उनके चेहरे पर हल्की-सी स्याही की परत चढ़ गई। लेकिन जया को निश्चय ही मेरे आने की खुशी हुई थी। दर्जनों छात्रों और प्राध्यापकों के सामने वह दौड़कर मेरे पास आई और मेरा हाथ अपने हाथों में लेकर बोली, 'आप आएंगे, मुझे विश्वास था।' और फिर उसके बाद ही प्रश्नों की झड़ी लगाई, 'आपने सिगरेट पीना कम किया या नहीं? आपने बच्चों को आगरा बुला लिया? दिल्ली के मकान का क्या किया? अब सिरदर्द तो नहीं होता? गर्दन की रुई-सुई का क्या हाल है? यहां हर कदम पर रुई-सुई मिल जाएगी। शाम को मेरे साथ घूमने चलेंगे न? बहुत

से पौधे दिखलाऊगी।"

उसकी ग्राखा की चमक और भावावेश मे लरजती ग्रावाज से कोई भी ग्रनुमान लगा सकता था कि मेरा उससे काफी गहरा परिचय था।

लेकिन वास्तव म हमारा परिचय बहुत सक्षिप्त और सरसरी था। एक साल पहले केवल एक दिन मुलाकात हुई थी। वह विद्यार्थियो के एक दल के साथ हमारे कालेज मे ग्राई थी। प्रि सीपल ने उनके स्वागत ग्रादि का काम मुझे सौंपा। मुझे उनके साथ एक दिन रुकना पडा।

वह विद्यार्थियो के दल से ग्रलग ग्रलग रहती थी। वह केवल एक युवक के साथ छाया सी बनकर चलती थी और बहुत धीरे बातें करती थी। दोनो म हसी मजाक भी होता था और कभी कभी वह रुष्ट होकर उस चैलज करती हुई भी दिखाई देती थी। लेकिन यह परिवतन कुछ क्षणा के लिए ही होता था और ग्रगले ही क्षण वह फिर ग्रपने म सिमट जाती थी।

मुझे उन विद्यार्थियो को लेकर ताजमहल और फतहपुर सीकरी जाना पडा। मैंने नोट किया कि वह और उसका साथी हमेशा पीछे छूट जाते थे और मुझे उनके लिए बार बार रुकना पडता था। दो-तीन बार ऐसा करने के बाद मुझे कुछ खीज हुई और मैंने साथ साथ रहने के लिए कहा। उसके साथी न बताया कि "उसकी तबियत ग्रक्सर खराब रहती है।'

वह ग्रागे भी कुछ कहना चाहता था कि उसने पलटकर उसके मुह पर ग्रपना हाथ रख दिया।

"क्या तकलीफ रहती है इन्हे ? मैंने फिर पूछा।

'कुछ नही सर ! भैया, बिल्कुल झूठ बोलते हैं।' लेकिन वह युवक बोला—' बात यह है सर, यह लडकी थोडी सी पागल है। न ठीक से खाना खाती है न किसी का कहना मानती है।

उसने उस पर तीखी निगाह डाली और फिर दूर चली गई। मैंने उस लडके स पूछा—

"इसकी वजह ? क्या इसका स्वास्थ्य खराब रहता है ?'

स्वास्थ्य तो भला-चगा है, यह तो ग्राप देख ही रहे हैं। लेकिन यह

बडी भावुक है, जाने क्या क्या सोचती रहती है। कभी कभी इसे छाती मे दद जरूर होता है। डॉक्टर इसे मामूली गैस का दद कहते है लेकिन यह अपन को ब्लड प्रेशर का रोगी मान बैठी है। उसे लगता है कि वह मोटी होती जा रही है और उसे खाना कम करके वजन कम करना चाहिए। कभी कभी यह रात रात-भर सोती ही नही। एस्प्रीन और स्लीपिंग पिल्स हमशा इसके साथ रहती हैं। इसलिए घर वाले इसे अकेले बाहर नही भेजत। मुझे इसीलिए इसके साथ आना पडा है।"

मुझे यह सब बातें जानकर आश्चय भी हुआ और लडकी के प्रति कुतूहल भी। कुछ दूरी पर वह नजरें धरती पर गडाए खडी थी। मैंने देखा कि उसका शरीर काफी स्वस्थ और सुडौल है। रग गहरा सावला होने पर भी उसके चेहरे पर स्वास्थ्य की ताजगी है। उसे देखने पर ऐसा नही लगता था कि वह एस्प्रीन या स्लीपिंग पिल्स का अक्सर सहारा लेती है।

मुझे लगा कि वह लडकी कुछ सनकी है, कुछ अजीब स्वभाव की है। विद्यार्थियो की भीड मे खो जाने के कारण मुझे उससे बात करने का अवसर बहुत कम मिलता था। फिर भी मैं बीच-बीच मे उसकी ओर देख लिया करता था। प्राय हर बार मैंने उसे अपने साथी के साथ बातें करते हुए या ठिठोली करते हुए पाया। विद्यार्थिया के दल मे और भी लडकिया थी—अनेक प्रा ता की भाषा वेशभूषा का मिश्रण था। लेकिन वह लडकी मुझे बिल्कुल अलग दिखाई देती थी।

उस लडकी और उसके साथी को लेकर कुछ लडको मे हसी मजाक भी चल रहा था। परोक्ष रूप मे मैंने उसे सुना। वे उन दोनो के बीच भाई बहन के सम्बन्ध पर स देह कर रहे थे। उनकी बाता से मुझे पता चला कि दोनो घर से एक ही बिस्तर और एक ही सूटकेस लाए है और दोनो होस्टल के एक ही कमरे मे ठहरे है। गमिया के दिन मे बिस्तर की कोई आवश्यकता नही होती। एक चद्दर मे सफर कट सकता है। सम्भव है उ होने अपना सामान एक ही होल्डोल मे और एक ही अटैची मे डाल लिया हो। मुझे इसमे कोई अजीब बात नही लगी। लेकिन और लोग तरह-तरह के कयास लगाए जा रहे थे।

फतहपुर सीकरी, आगरे का किला, दयालबाग और फिर ताजमहल।

सुबह से घूमने निकले थे। ताजमहल में शाम के झुटपुटे में पहुचे। आशय था कि ताजमहल को चादनी मे देखेंगे। दिन भर घूमते घूमते मेरे सिर म दद होने लगा था।

ताजमहल के एक कोने मे चुपचाप कुछ देर बैठकर मैं सिरदद म कुछ राहत महसूस करने लगा। विद्यार्थी इधर-उधर टहल रहे थे। मेरी पीठ ताजमहल की ओर थी और मैं आसमान मे उठी एक बदली को बिना किसी प्रयोजन के देख रहा था। जाने कब वह लडकी चुपके से मेरे पास आकर बैठ गई थी।

'सर !' उसने धीरे से कहा।

मैं चौंक पडा। वह अकेली थी। उसका साथी कही खो गया था।

"सर ! आपको ताजमहल सुन्दर नही लगता ?' उसने पूछा।

क्या ? जो चीज सुन्दर है वह तो सभी को अच्छी लगती है।' मैंने सहज भाव से उत्तर दिया।

'लेकिन सर ! आप इसकी तरफ पीठ करके क्यो बैठे हैं ?"

'मैं उस काली बदली को देख रहा हू। तारो भरे आसमान म अकेली सीना तानकर उठती हुई यह बदली कितनी अच्छी लग रही है !"

मेरी बात से वह कुछ सकपका गई। दो तीन बार उसकी पलकें कापी—

फिर वह बोली—

'इसका अथ है सर, कि जो चीज सुन्दर नही है आपको वह भी अच्छी लगती है।'

"क्यो, काली बदली सुन्दर नहीं होती ?"

'मैं तो नही मानती।'

मैंने कुछ दार्शनिक स्पष्टीकरण देना चाहा। मैंने कहा—

'सुन्दरता देखी जाने वाली वस्तु का गुण नहीं होता, देखने वाले के मन का भाव होता है। कम-से-कम मेरी मान्यता यही है।'

वह थोडी देर तक मेरी बात पर विचार करती रही फिर बोली—

'सर, आप अजीब हैं।"

मुझे हसी आ गई। वह मेरी बाह पकडकर बोली—

"चलिए, हम ताज का एक राउड लेंगे।"

मैं उठकर चल पडा। कुछ देर के बाद मैंने पूछा—

'तुम्हारा मायी कहा गया ?"

वह खिलखिलाकर हस पडी, 'भैया! मुझसे बोर होकर और लडका के साथ टहल रहा है।"

'तुमसे बोर होकर ?" मैंने पूछा।

'हा मर, कभी-कभी उसे बहुत बोर करती हू।"

'कभी-कभी न। हमेशा तो नही ?"

'नही, कभी कभी। जब मुझे दौरा पडता है।"

'दौरा ?"

वह कुछ गम्भीर हो गई। कुछ देर हम दोनो के बीच कोई बातचीत नही हुई। लेकिन मैं उसके दौरे के विषय मे जानने को उत्सुक था। मेरे दोबारा याद दिलाने पर वह बोली—

"न जाने मुझे कभी कभी क्या हो जाता है! लगता है कि लम्बी रस्सी से साथ खूटे में बधी गाय की तरह एक घेरे मे जा रही हू। मेरे मन म एक अजीब खालीपन, एक दम घोटने वाला बोझ सा महसूस होने लगता है। तब मेरी इच्छा होती है कि मैं चीखू चिल्लाऊ। मेरे भीतर चिडचिडापन भर जाता है। मुझे किसी का बोलना, किसी का पास रहना अच्छा नही लगता। इच्छा होती है कि "

अन्तिम बात कहते-कहते वह रुक गई और मेरी ओर देखने लगी। मैं स्पष्ट देख रहा था कि उसके होठ फडक रहे हैं।

उसकी असामान्य सवेदनशीलता मेरे सामने स्पष्ट थी। उसकी बातो ने मुझे थोडी देर के लिए उद्विग्न कर दिया। कुछ देर सोचने के बाद मैंने उसे सात्वना देने के उद्देश्य से कहा—

'और इन सब बातो से तुम्हें लगता है कि तुम असामान्य हो। जो एहसास तुम्हें होता है, वह और किसी को नही होता।"

"मुझे ठीक ऐसा ही लगता है।" वह बोली।

मैंने कहा, "तुम्हारा खयाल गलत है। हमारा जीवन आज इतने तनावो से घिरा है कि खालीपन और व्यथता का एहसास हर सवेदनशील व्यक्ति

को होता है। जिसका दिल पत्थर है और मस्तिष्क खाली है, सिर्फ उसे इस तरह का एहसास नहीं होता। कहावत है न—'सब ते भले मूढ़मति जिन्ह न व्यापे जगत गति'। लगता है तुम जरूरत से कुछ ज्यादा संवेदनशील हो, अतिभावुक हो।

"क्या आपको भी यह एहसास होता है, सर ?"

"क्या नहीं। मेरा दिल पत्थर नहीं है।"

"तो सर आप अपनी परेशानी पर कैसे काबू पाते हैं ?"

"यही, अपना ध्यान उन बातों से हटाकर और कामों में लगा देता हूं। अक्सर मैं एकान्त छोड़कर किसी अच्छे दोस्त के पास गपशप लड़ाने चला जाता हूं।"

वह मेरी बात पर बड़ी देर तक विचार करती रही, फिर बोली—

"जिसके कोई दोस्त न हो, वह क्या करे ?"

मैंने कहा "मैं ऐसे आदमी की कल्पना नहीं कर सकता।"

वह फीकी हंसी हंस दी—

"यथार्थ में ऐसे व्यक्ति से मिलने पर आप उसकी बात पर विश्वास नहीं कर सकते।"

मैं कुछ उत्तर नहीं दे पाया। वह लड़की मेरे लिए उत्तरोत्तर रहस्य होती जा रही थी। उसके बारे में बहुत सी बातें जानने की जिज्ञासा हो रही थी।

मुझे याद आया कि थोड़ी देर पहले उसने मुझे बताया था कि उसका भैया बोर होकर दूसरे लड़कों के साथ चला गया था। तो क्या उसे थोड़ी देर पहले अवसाद का दौरा पड़ा था ? लेकिन इस समय तो वह बिल्कुल सामान्य दिखाई देती थी। मैंने उसकी तबियत के बारे में पूछा तो वह बोली—

"तबियत ? ठीक तो है, सर।"

मैं बड़ी देर से नोट कर रहा था कि हर बात के साथ वह 'सर' लगाना नहीं भूलती। विद्यार्थियों को 'सर' कहने की आदत पड़ जाती है। लेकिन मुझे उसके मुंह से 'सर' शब्द अच्छा नहीं लग रहा था। फिर भी मैंने इस पर कोई आपत्ति नहीं की। मैंने कहा, "तुम बहुत अच्छी लग रही हो। कोई

यह नही मान सकता कि थोडी देर पहले तुम्हे चिडचिडेपन का दौरा पडा था।'

वह पजो के बल जमीन पर उकड् बैठ गई और दोनो हाथो मे सिर को थामकर सोचने लगी। मैं एक क्षण के लिए घबरा सा गया। मैंने पास बैठते हुए पूछा, 'क्या हुआ ?''

'बठिए, बताती हू।' सगमरमर के फर्श पर अब वह पालथी मारकर बैठ गई। उसने बाह खीचकर मुझे भी आराम मे बठ जाने का सकेत किया।

"बडी अजीब बात है, सर।"

"क्या ?" मैंने पूछा।

'यही कि कुछ देर पहले मुझे दौरा पडा था। और मैं बिना कोई दवा लिए अब बिल्कुल ठीक हू।'

"यानी, तुम हर बार दौरा पडने पर कुछ दवा लेती थी।"

'दिन के वक्त एस्प्रीन की डबल डोज, रात का स्लीपिंग पिल्स या कुछ और। कल रात एस्प्रीन के सिवा सब कुछ खत्म हो गया था। सुबह जल्दी ही होस्टल से निकल पडे। रास्ते मे कोई ड्रग स्टोर भी नही मिला।

मैं उसकी तरफ आश्चर्य से देखने लगा। उसके चेहरे पर एक विचित्र प्रसन्नता खिली, उसकी आखो मे छोटे बच्चे की तरह चचलता प्रकट हुई। अचानक वह चहककर बोली—

"सर, यह आपकी वजह से हुआ।"

'कैसे ?' मैंने यू ही पूछा।

"इस केस का जवाब तो मैं भी खोज रही हू। मेरे पास अब एक ही उत्तर है। और वह यह कि आपसे मिलने पर मैं उस बात को भूल ही गई। सर, आप न मिलते तो आज मुझे बडी यातना भोगनी पडती। मेरे पास सिर्फ एस्प्रीन थी। पानी पास न होने से वह भी नही ले सकी। मैं बिना पानी के छोटी सी गोली भी नही निगल सकती हू। गले मे अटक जाती है।" अपनी बात पर वह स्वय ही खिलखिलाकर हस पडी।

मुझे याद आया कि थोडी देर पहले मेरे सिर मे भी बडे जोर का दर्द हो रहा था। जब से यह लडकी बातें कर रही थी, मुझे सिरदर्द का कतई

एहसास ही नही हुआ। शायद मेरा ध्यान दूसरी तरफ बट जाने के कारण ही ऐसा हुआ था। मैंने उसे जब यह बात बताई तो वह और भी प्रसन्न हुई। फिर बोली —

'सर ! आपके सिरदद की वजह तो सिगरेट है। आप चेन-स्मोकर है।'

"नही।' मैंने प्रतिवाद किया।

'लेकिन, जब से मैं आई हू, आप लगातार पिए जा रहे हैं।"

मैं निरुत्तर था।

'अच्छा सर, जब आपके सिर म दद होता है तो आप कौनसी गोली लेते हैं ?"

मैंन कुछ याद करके कहा—' पहले हल्की फुल्की दद की गोली स काम चल जाता था। लेकिन कुछ दिनो से 'स्ट्राग डोज़ लेनी पडती है।"

मुझे उसके बदन मे फिर हल्की सी कपकपी दिखाई दी। शायद यह उसकी एक आदत बन चुकी थी। कभी कभी उसकी पलकें भी कापती थी या यू कहू कि वह बार बार उन्ह झपकती थी। मैंने नोट किया कि ऐसा अक्सर तब होता था जब वह कुछ बात कहते कहते रह जाती थी और प्रसग बदल देती थी।

' सर ! आपने शादी क्यो नही की ?" उसन अचानक प्रसग बदला।

मैं हस दिया—

तुम्ह कैसे पता चला कि मैंने शादी नही की है ?"

वह बोली, ' आप होस्ल मेट अकेले रहते हैं न।'

मैंने बताया कि मरी शादी हो चुकी है। मेरी पत्नी और बच्चे दिल्ली म रहत हैं। मैं यहा अकेला इसलिए रहता हू कि मेरी यहा कुछ महीने पहले पोस्टिग हुई है। जब तक मैं यहा कफम नही हो जाता, दिल्ली का मकान नही छोड सकता क्याकि एक बार छोडन पर यदि वापस जाना पडा, तो दिल्ली म वसा मकान उतने किराय पर नही मिलेगा। आगरा स दिल्ली तीन घट का रास्ता है। मैं हर शनिवार को अपने बच्चा के पास जा सकता हू।"

वह कुछ देर सोचती रही, फिर बोली—

"सर, मैं लौटते वक्त आपके साथ आपके घर चलू ?"

मुझे उसका प्रस्ताव बडा अजीब लगा। मैंने बात बदलने के प्रयोजन से कहा—"क्या इस सुहावने वातावरण मे भी यह जरूरी है कि तुम मुझे 'सर' का खिताब दिए जाओ ?

"तो फिर मैं क्या कहू ?

"सिन्हा या मिस्टर सिन्हा। जो तुम्हारे मन मे आए।"

"क्या आपको मेरा सर कहना बुरा लगता है ?"

'बुरा तो नहीं अजीब जरूर लगता है। आखिर मैं तुम्हारा अध्यापक तो हू नहीं। एक दिन के लिए नौकरी की मजबूरी के कारण मैं तुम्हारे साथ हू।"

"मतलब यह कि मेरे साथ बात करना आपकी मजबूरी है।"

मैंने देखा कि वह इस बात पर कुछ उदास हो गई है। मैंने कहा—

"अच्छा बाबा, मुझे सर ही कहो। मेरी बात का गलत अर्थ तो न लगाओ।" वह गम्भीर बनी रही।

"आपने मेरी बात का जवाब नही दिया।"

'किस बात का ?"

कि मैं आपके साथ आपके घर चल सकती हू ? मैं शनिवार तक यहा रुक जाऊगी।"

"तुम्हारे भैया नाराज नही होगे ?"

"मुझ पर कोई शासन नही कर सकता। उससे कहूगी कि शनिवार तक रुक जाए या फिर अकेला चला जाए।"

"और तुम्हारे प्रोफेसर साहब नाराज होंगे तो ?"

'वे बहुत ही भले है। मुझसे कभी नाराज नही होते।"

लडके-लडकियो का दल अब एक जगह इकट्ठा होने लगा था। चलने की तयारी हो रही थी। मैंने अनुमान लगाया कि मैं उस लडकी के साथ एकात म एक घटे स बात कर रहा हू। इस बीच मेरे सिर का दद काफी कम हो गया था।

चलो अब वापस चलना है।" मैंने उठत हुए कहा।

उदास-सी होकर वह उठ खडी हुई।

"सर ! रास्ते मे कोई ड्रग स्टोर पडेगा ?'

'क्यो ?" मैंने पूछा।

"मेरी टबलेटस खत्म हो गई हैं।"

'आज की रात बिना टबलेटस के सही।"

'क्या आप रात को मेरे कमर म रहग ?"

मैं बेवकूफ की तरह उसके चेहरे पर देखने लगा। वह बोली—

"आप पास होगे, तो मुझे विश्वास है कि टेबलेटस की जरूरत नही पडेगी।" मैं कोई उत्तर नही दे सका, सिफ उसकी ओर दखता रहा। वह बडे सहज ढग स बातें कर रही थी।

'आप मेरे साथ मरे घर चलेंगे, सर ?'

उसके इस प्रस्ताव पर मैं केवल जोर से हस दिया।

"क्यो ? इसम हसने की क्या बात है ?"

मैंन कहा "कभी कभी तुम बच्चो जैसी बातें करती हो।

"अच्छा, कम से कम मेरे साथ दिल्ली तक चलिए। मुझे वहा गाडी मे बिठाकर अपने घर चले जाना।"

'लेकिन क्या ?" मैंने कहा, "तुम्हारे साथ तुम्हारा भाई है और लडके लडकिया हैं। कठिनाई क्या है ?"

उसन कोई उत्तर नही दिया। उठकर चल दी। सामन लडकियो के झुड से निकलकर उसका भाई, कैमरा कधे पर लटकाए चला आ रहा था। उसके पास आने पर वह आदेश के से स्वर म बोली—

"देखो, रास्ते म ड्रग स्टोर पर रुकना है।'

मुझे देखकर उसका भाई बोला—

'सर, इस पगली लडकी को थोडा समझाए। जान क्या क्या टबलटस खाने लगी है।'

उसन झपटकर उसके मुह पर हाथ रखकर उस बोलन मे रोका। उसन मुह को छुडान की कोशिश की लेकिन उसकी गदन लडकी की बाहो म जकड गई। लडके लडकियो के दल के बीच वे मुदनी सी करते दिखाई द रह थ।

हम वहा स चले तो काफी रात हो गई थी। रास्त म एक होटल मे खाना तय था। वह मेरी मेज पर आकर बैठ गई। अपने लिए उसन कबाब

काफी का आर्डर दिया था।

"खाना नहीं लोगी ?" मैंने पूछा।

"नहीं, भूख नहीं है।"

उसका भाई पास आकर बोला—

"सर इसे समझाइए, इसका रोज यही हाल है। कई कई दिन खाना नहीं खाती।"

"तुम चुप भी रहो न।" उसने अपने भाई से कहा।

"भई, यह बात तो ठीक नहीं है।' मैंने उससे कहा 'खाने के मामले में तुम्हें लापरवाह नहीं होना चाहिए।"

मैंने बैरे को आवाज देकर एक और राइस प्लेट लाने को कहा। वह बोली—

'नहीं सर, मुझे भूख नहीं है।'

"भूख नहीं है, तब भी खाना पड़ेगा।' मैंने बनावटी गुस्से के स्वर में कहा।

वह चुप हो गई। उसने कोई विरोध नहीं किया। बैरा राइस प्लेट लेकर आया तो वह चुपचाप खाने लगी। बीच बीच में रुककर उसने आधी प्लेट खाली की।

होस्टल वापस आते समय हमारी बस बाजार में रुकी। बाजार अभी खुला था। खरीदारी करने के उद्देश्य से बस को यहां एक घंटे के लिए रोका गया था। मेरी बाज़ार घूमने की कतई इच्छा नहीं थी। बाजार की भीड़ और स्कूटर रिक्शा की आवाज़ों से मेरे सिर में फिर दर्द होने लगा था। थकान से बदन टूट रहा था। इच्छा हो रही थी कि अपने कमरे में वापस चलकर सो जाऊं।

सड़क से कुछ हटकर एक ऊबड़ खाबड़ पार्क में खिड़की से सिर टिका कर आंखें मूंदे मैं यही सोच रहा था कि यहां से रिक्शा लेकर होस्टल चला जाऊं तो लोग मुझे ढूंढने में परेशान तो नहीं होंगे। इतने में वह कहीं से आ गई। सर, क्या आपकी तबियत ठीक नहीं है ?" उसने पास बैठते हुए कहा। मैं संभलकर बैठ गया और आश्चर्य से उसकी ओर देखने लगा। वह अटैची खरीद लाई थी।

"इतनी जल्दी तुमने खरीदारी कर ली ?" मैंने पूछा।

"मुझे क्या खरीदारी करनी थी। मैंया न एक अटैची खरीदी है। पास ही एक दुकान से मिल गई।"

"तुम घूमन नहीं गई ?"

"मुझे अच्छा नही लगता।"

"तुम्हे अच्छा क्या लगता है ?"

"आपके पास बैठना, अकेले मे।"

गुमसुम सी दीखने वाली लड़की इतनी बेझिझक बातें करगी, इसका किसी को विश्वास नही होगा। लेकिन मुझे हैरानी नही हुई। वह मुझसे इतनी सटकर बैठी थी कि मैं उसके शरीर की गरमी महसूस कर सकता था। अचानक उसन अपना हाथ मेरे हाथ पर रखा और फिर चौंककर बोली—

"सर, आपको टेम्प्रेचर है।'

मुझे लगा जैसे बरफ-सी ठडी किसी बेजान चीज न मुझे छू लिया है। मैंन अपना हाथ खींच लिया।

'मुझे टेम्प्रेचर नही, तुम्हारे हाथ बिल्कुल ठडे है।' मैंने कहा। वह मेरी बात मानने के लिए तैयार नही थी। उसने मेरा हाथ फिर दोनो हाथो मे दबा लिया और उसे उठाकर चेहरे तक ले गई। उसकी गदन, ठोडी के आस पास का हिस्सा काफी गरम था। मुझे कुछ सतोष हुआ।

"तुम्हारा शरीर तो गरम है लेकिन हाथ क्यो ठडे हैं ?"

"हमेशा ऐसे ही रहते हैं। क्यो, इसमे क्या है ?"

"यह ठीक नही है। स्वस्थ व्यक्ति के हाथ इतन ठडे नही होने चाहिए।" उसने मेरे हाथ को अपने दोनो हाथो और गदन के बीच अब भी दबा रखा था। मैंने भी कोई एतराज नही किया। लेकिन शीघ्र ही मुझे लगा कि उसके हाथ गरम हो गए हैं और गदन के जिस हिस्से को मेरा हाथ छू रहा था, वह तो बहुत ही गरम हो गया है। उसकी सास भी काफी गरम हो चली थी।

"सर हम होस्टल चलेंगे, अभी, इसी वक्त।" उसन जस अधिकार के स्वर मे कहा।

"उन सबको आने दो। साथ चलेंगे।" मैंने कहा।

"नहीं सर," वह बोली, "आपकी तबियत ठीक नहीं है। एक टेबलेट लेकर सो जाइए।"

मेरी भी यही इच्छा हो रही थी, क्योंकि मैं अब तक बहुत थक गया था। लेकिन उस समय उसके साथ चुपचाप चले जाने से और लोग न जाने क्या सोचें, इसलिए मैंने उसकी बात नहीं मानी।

"आप मेरे साथ जाने से डरते हैं ?" उसने प्रश्न किया।

मैं मुस्कराकर उसके साथ चल पड़ा। बस से उतरकर हमने एक रिक्शा ले ली। रास्ते में मुझे याद आया कि मेरे कमरे की चाबी उस लड़के की जेब में ही है जिसने चलते वक्त मेरे कमरे का दरवाजा बन्द किया था। मैंने जब उसे यह बात बताई तो वह बोली, "कोई बात नहीं। तब तक आप मेरे कमरे में लेटना।'

होस्टल के जिस ब्लाक में उसका कमरा था वह बिल्कुल खाली था। सभी लड़के लड़कियां बाहर थे। उसके साथ कमरे में जाते समय एक क्षण के लिए मुझे झिझक हुई, फिर मैंने उस झिझक को दिल से निकाल दिया। मुझे खाट पर लिटाकर वह पानी का एक गिलास लाई। फिर अपने पर्स को खोलते हुए बोली—

' आपको सिरदर्द की टेबलेट देती हूं।'

खूब टटोलने पर भी जब उसे वह टेबलेट नहीं मिली तो उसने पर्स को उलट दिया। रंग बिरंगी पन्नियों में लिपटी हुई अनेक प्रकार की गोलियां मेज़ पर बिखर गई। मुझे उसने एक गोली उठाकर दी। लेकिन मैं मेज़ पर बिखरी रंग बिरंगी गोलियों को देखकर चकित रह गया। उसमें कई प्रकार की दर्द शामक गोलियां और नींद की गोलियों के बीच कुछ ऐसी गोलियां भी दिखाई दी जिन्हें मैं नहीं पहचानता था। जाने मुझे क्या सूझा मैंने मेज़ पर बिखरी गोलियों को मुट्ठी में भरा और जेब में डाल लिया।

तुम्हें ये गोलियां बिना नुस्खे के किसने दी ? मैंने कुछ कठोर स्वर में पूछा।

वह मुझ पर जैसे टूट पड़ी। अपने पूरे जोर से उसने मेरा हाथ दबा लिया और एक हाथ से मेरी जेब में हाथ डालने की कोशिश करने लगी।

मैं बिस्तर से उठ गया। एक हल्के से धक्के से मैंने उसे अपने से दूर किया और कमर से बाहर निकलने के लिए लपका लेकिन वह रास्ता रोककर खडी हो गई।

मेरी टबलेटस लौटा दीजिए, प्लीज।' वह कातर स्वर में बोली।

य गोलिया तुम क्यों खा रही हो ? ' मैंने पूछा।

मुझसे कुछ मत पूछिए प्लीज। उसकी आखो में आसू उमड आए।

मैंने गोलिया उसके पर्स मे डाल दी और कुर्सी पर बैठकर उसके चेहरे की ओर देखने लगा। पहली बार मुझे लगा कि उसके चेहरे पर जो ताजगी होनी चाहिए थी वह नहीं है। उसके स्थान पर चन्द मजबूरिया उसकी आखो से झाक रही हैं। सरद हाथ पतली सी बीमार अगुलिया, आखो के पास पास उठती हुई न ही न ही कीलें, जो चेहरे के सावलेपन में छिप सी गई थी, उस लडकी की कोई और ही कहानी कह रही थी। वह मेरे पैरो के पास बैठ गई और रुकते रुकते बोली—

सर, आप मुझसे घृणा तो नहीं करेंगे ?''

मैंने उसके गालो पर झुकी लट को धीरे से खीचकर कहा—

'ऐसी बात दोबारा मत कहना। मैं तुम्हारी इन गोलियों से जरूर नाराज हुआ लेकिन तुम्हे घृणा करने की बात मैं सोच भी नहीं सकता। मैं नहीं जानता तुम्हारी क्या मजबूरिया हैं। लेकिन मै हृदय से चाहता हू कि तुम उन मजबूरियो पर काबू पाकर सामान्य जीवन जी सको। मैं ईश्वर को नहीं मानता। मैं जीवन का जीवन का सबसे बडा और पवित्र ध्येय मानता हू। मेरी इच्छा है कि तुम कृत्रिम शाति और कृत्रिम उत्तेजना से दूर रह कर सहज ढग से उमग भरा जीवन बिता सको। इसके लिए तुम्हें यदि मेरी मदद की जरूरत हो तो मैं सच्चे दोस्त की तरह तुम्हारे काम आ सकता हू।

उसने इतना ही कहा "सर मैं कोशिश करूगी।

दूसरे दिन सुबह सब विद्यार्थियो को अपने अपने घर जाना था। बारी-बारी सबने मुझसे विदा ली। एक ही दिन में ये लडकिया और लडके मेरे जीवन के अग बन गए थे इसलिए उन्हें विदा देते समय मन में कहीं कुछ चुभन कुछ कसक उठनी स्वाभाविक थी। किन्तु वह जब मेरे सामने

आकर खडी हो गई, तो मैं न कुछ बोल सका और न उसके चेहरे की ओर देख सका। मैं उसके करीब जा खडा हुआ। वहा दो तीन और लडके भी खडे थे। सहज भाव म मैंने उसकी कमर में हाथ डालकर उसे अपनी ओर खींचा। वह मेरे कन्धे पर लुढ़क गई। फिर वह धीरे धीरे कमरे स बाहर चली गई। मुझे लगा जैस मैंने एक लडकी और लडके मे भेद न करके गलती की है।

उसके बाद एक महीने तक मेरी डाक मे ढेर-सी चिट्ठिया आई। पर्यटन यात्रा मे आए प्राय सभी लडके लडकिया ने भाव विभोर होकर मेरे प्रति स्नेह प्रकट किया था। किसी ने यात्रा के कुछ सुखद प्रसगो को ममता से याद किया था, किसी ने उम्र भर न भूलने का वायदा किया था। मैंने सभी पत्रो का विस्तृत उत्तर दिया। मैं जानता था कि कभी न भूलने के ये वायदे क्षणिक हैं। मनुष्य-जीवन मे इनके लिए कोई स्थान नहीं है।

उसके पत्र को भी मैंने उसी भाव से लिया। उसने 'प्रिय ' से शुरू करके 'तुम्हारी' से पत्र समाप्त किया था और कलेवर मे वे सभी बातें भरी थी जो किशोरावस्था की लडकिया अक्सर अपने प्रेम पत्रो मे लिखती है। मेरे लिए उन उद्गारो का कोई विशेष महत्व नही था। लेकिन पत्र में इतनी बचकाना बातें थी कि उसे यूनिवर्सिटी की लडकी मानना कठिन था। कहो कविता की पक्तिया दी गई थी, उर्दू की नज़मो के टुकडे थे। पत्र की कृत्रिम शैली से लगता था कि उसके भीतर प्रेम पत्र लिखने की हसरत पहली बार प्रकट होना चाह रही थी।

इस पत्र का उत्तर क्या देना चाहिए इस तर्क वितर्क म दस-बारह दिन तक पत्र मेरी जेब मे ही पडा रहा। इस बीच उसका एक और पत्र आया। यह उसस भी लम्बा था। उसने पहले पत्र का उत्तर न देने के लिए उलाहना दिया था। लेकिन जिस बात को पढकर मुझे प्रसन्नता हुई वह यह थी कि उसने यहा से जाने के बाद एक दो बार एस्प्रीन को छोडकर कोई गोली नहीं ली थी। अपनी आदत के सम्बन्ध मे विस्तार से उसने सारा इतिहास लिखा था जिसका प्रारम्भ प्रोफेसर राम के साथ सम्पर्क होने पर हुआ था। प्रोफेसर राम पचास के लगभग अवस्था के अधेड व्यक्ति थे। पत्र मे खींचे गए उनके खाके स लगता था कि वे विचारो से काफी

आधुनिक थे, कम से कम सेक्स के सम्बन्ध मे अवश्य उदार दृष्टिकोण वाले थे। जया प्रोफेसर राम की सर्वाधिक प्रिय शिष्या थी। जया का कहना था कि वे उसका बहुत खयाल रखते थे और कुछ क्षण के लिए भी उसे उदास नही देख सकते थे। उदासी और अवसाद के उसके दौरा स व खिन्न होते थे। उनकी खिन्नता को ध्यान मे रखकर उसने शुरू शुरू म उन गोलियो का सेवन शुरू किया था जिन्हें लेने के बाद उसके मन का बोझ कम हो जाता था और वह अपने को बहुत हल्का और प्रसन्न महसूस करती थी। किन्तु उसके बाद अवसाद का दौरा अक्सर पडने लगा। प्राय ऐसा होता था कि जब उस प्रोफेसर राम के घर जाना होता था या नई पुस्तका के नोट लेने के लिए उसके साथ पुस्तकालय मे बैठना होता था, तो उसे रग बिरगी पन्नी वाली गोली लेनी पडती थी।

पत्र के अन्त मे उसने न केवल पत्र लिखने का बल्कि लगातार लिखत रहने का बार बार अनुरोध किया था।

मैंने उन दोनो पत्रो की एक एक बात का विस्तार के साथ उत्तर दिया। पत्र म मैंने स्वीकार किया, जो सौ प्रतिशत सच था, कि उसके जाने के बाद मेरा मन कुछ दिन उदास रहा और उसके बाद जब भी उसका खयाल आता है, तो उदासी लौट आती है।

इसके बाद हर महीने उसके एक दो पत्र मिलते रहे जिनसे लगता था कि अपनी आदत पर काबू पाने के लिए वह जी-तोड कोशिश कर रही है। मैं उसके हर पत्र का उत्तर दता रहा पूरे मनोयोग और पूरी ईमानदारी के साथ। और अन्त म मुझे उसका वह पत्र मिला जिसमे मुझसे यूनिवर्सिटी के एक प्रोग्राम मे आने के लिए कहा गया था। चूकि मैं उससे मिलने के लिए बहुत उत्सुक था मुझे आना ही पडा।

सभरवाल और डॉक्टर सिंह अपने अपने कमरे मे चले गए थे। मेज पर खाली गिलास, दो खाली बोतलें और नमकीन की खाली प्लेट पडी हुई थी। मुझे महसूस हो रहा था कि भीतर-बाहर सब कुछ खाली है।

आज शाम जब मैं यूनिवर्सिटी के लैक्चर हाल स अपने कमरे की तरफ आ रहा था तो वह मुझे सडक क किनारे खडी हुई अकेली दिखाई दी थी। मैं उसके पास स गुजरा तो वह रोककर बोली—

"सर, आप कब जा रहे हैं ?"

"कल सुबह पांच बजे।" मैंने उत्तर दिया।

वह चुप हो गई। जमीन पर नजरें गडाए हुए कुछ देर तक खडी रही, फिर बोली—

"आप जानते हैं, मेरा आज रिजल्ट निकल गया है ?"

"अच्छा !" मैंने प्रसन्नता से कहा, "कैसा रहा ? सर्वप्रथम आई हो न ?" उसने स्वयं कई बार पत्र मे लिखा था कि वह यूनिवर्सिटी मे फस्ट आएगी। प्रोफेसर राम की वह प्रिय शिष्या थी और वैसे भी उसका कैरियर फस्ट क्लास रहा था। वह तुरन्त कुछ उत्तर न दे सकी। एक क्षण के लिए उसने नजरें उठाईं तो मैंने देखा कि उसकी पलकें कांप रही हैं। फिर ओठों को भीचकर उसने अपने को संभाला और बोली, "सर, प्रोफेसर राम ने मुझे क्लास म चौथा स्थान दिया है। फस्ट क्लास से दो नम्बर कम। जानते हैं क्यो ? इसीलिए कि मैंने उन्हें आपके सारे पत्र दिखाए थे।"

और इतना कहने के बाद वह चुपचाप वहा से चल दी थी।

मेरे कमरे के बाहर इस समय घुप अंधेरा है। जाने क्यो मुझे लग रहा है कि मैंने अपने कमरे की बत्ती बुझा दी तो बाहर का अंधेरा भीतर घुसकर मेरा दम घोट देगा। मैं बत्ती बुझाए बिना सोने की कोशिश कर रहा हू। लेकिन आखें बन्द करते ही मुझे पन्नी मे लिपटी रंग बिरंगी गोलियां दिखाई देती हैं, एक दो नहीं, सैकडा हजारो, ढेर के ढेर।

अविरोध

मन उसे आते देखा था। इधर-उधर देखकर, डरते डरते वह गेट के अंदर आया था। सीढ़िया चढ़ने से पहले वह ठिठककर खड़ा हुआ और कुछ सोचने लगा था। मैंने उसे स्पष्ट पहचान लिया था और यह भी जान लिया था कि वह अस्पताल की सीढ़िया चढ़ने मे क्यो झिझक रहा है। किन्तु मैं उसके आने का कारण नहीं समझ पा रहा था क्योकि वह जैसा दस वर्ष पहले था, वैसा ही दिखाई दे रहा था। चेहरे की हड्डिया और गर्दन की नसें साफ दिखाई दे रही थी। आखें कोटरो मे धसी हुई थी। सिर पर मैला सा अंगोछा था, बदन पर फटा पुराना कुर्ता था, और नीचे खाकी पतलून थी जिस पर कई पैबंद लगे थे और जो सभवत किसी फौजी नौकर से मिली बख्शीश थी।

मैं उससे नही मिलना चाहता था। सच बात तो यह है कि मुझे उसम नफरत थी। मैं उसकी शक्ल तक नहीं देखना चाहता था। इसीलिए मैं पिछले दरवाजे से बाहर निकल गया था। अस्पताल से लगे हुए दो कमरे मेरे और मेरे परिवार के रहने के लिए थे। सुशीला ने मेरी ओर गौर से देखा था। शायद इसलिए कि मैं समय से पहले उठकर चला आया था। अपने कमरे म आकर मैंने यू ही किताब खोलकर पढने का बहाना किया था, किन्तु किताब मे मुझे सिवाय उसके चेहरे के कुछ नहा दीखा था।

पपरौला के अस्पताल मे बदली के लिए मुझे काफी कोशिश करनी पड़ी थी। अब मैं अपने घर के निकट आ गया था। रोज नहीं तो सातवें दिन तो घर जा ही सकता था। घर से मेरी मुराद चार कमरो के उस कच्चे मकान से है जो हर साल लीपा-पोती और मरम्मत के बावजूद पचास साल पुराना लगता है और जहा मेरी मा अकेली रहती है। लाख

समझाने पर भी मा सुशीला के साथ रहने के लिए तैयार नही हुई थी क्योकि सुशीला जात बिरादरी की नही थी। सुशीला के साथ मेरी शादी दो साल पहले दिल्ली मे हुई थी जब मैं एम० बी० बी० एस० करने के बाद इरविन अस्पताल म शिशु के रूप मे काम कर रहा था और सुशीला वहा नस थी। सुशीला का आग्रह था कि मा की देखभाल के लिए हमे उनको अपने साथ रखना चाहिए, या कम से कम घर के निकट रहना चाहिए।

पुन खडड के किनारे के इस अस्पताल की कच्ची दीवारो का खोखलापन पिछले पचास वर्षों म बढता ही रहा है। दवाई की शीशिया रखने के लिए कपाउडर के कमरे म पडी मेज़ की लकडी गल चुकी थी और डॉक्टर के कमरे की छत का एक हिस्सा लैम्प के धुए से गहरा काला हो गया था। एक चौथाई सदी गुलामी और उससे भी लम्बी आज़ादी की एक सी अनुभूति म सिमटे हुए इस अस्पताल को अस्पताल कहना अजीब सा लगता था किन्तु मेरे लिए वह अस्पताल ही था और मैं उसका इन्चाज डाक्टर।

दो बजे तक रोगियो का ताता लगा रहता था। उसके बाद अस्पताल की व्यवस्था ठीक करने म उलझना पडता था। साधारण दवाइयो का स्टाक भी खत्म था। गम्भीर रोगियो के तत्काल उपचार के लिए कुछ अच्छी और कीमती दवाइयो की कमी बहुत खटकती थी। रात-बरात गाव से आने वाले रोगियो के लिए कम से-कम एक कमरा भी जरूरी था। अपनी जरूरतो की लम्बी सूची बनाकर एक प्रस्ताव अधिकारियो को भेजन के बाद मैं कुछ हल्का हुआ था कि बाहर मगलू दिखाई दिया।

किन्तु पुस्तक पढने का अभिनय मैं ज्यादा देर नही कर सका। न चाहते हुए भी मैं घर से निकल, अस्पताल की ओर चल पडा। वह मुझे बरामदे मे ही मिल गया। बडे अदब से दोनो हाथ जोडकर उसने मुझे नमस्कार किया और कहा, "भैया, सातो बहुत बीमार है। चलकर देख लो तो बडी मेहरबानी होगी।"

सातो नाम ने मेरे भीतर हथौडे की सी चोट की। मैंने उसके चेहरे से तुरन्त अपनी नजर हटा ली। न जाने क्या, मुझे उसकी ओर देखने की

हिम्मत नही हो रही थी। फिर कुछ साहस बटोरकर मैंने पूछा—

'क्या हुआ सातो को ?

"कल रात उसको खून की कै हुई थी।"

'लेकिन कैसे ? क्या बहुत दिनो से बीमार थी ?"

"बीमार तो कई दिना से है। हल्का हल्का बुखार रहता है। कमजोर बहुत ज्यादा है। टाडे के अस्पताल मे दिखाया था। डाक्टर कहते है इस टी० बी० है। उन्होने कहा, घर पर इलाज कराओ, अस्पताल म जगह खाली होगी तो बुला लेंगे। किसी की सिफारिश होती तो दाखिल हो भी जाती, लेकिन सिफारिश के लिए किसके पास जाऊ ?"

'उसकी तो शादी हो गई थी न ? घरवाला कहा रहता है ?"

'वह तो कही दिल्ली मे है। सुना है, ड्राइवरी मे अच्छे पैसे कमाता है। लेकिन घर एक पैसा नही भेजता। कहते हैं, उसने वहा दूसरी शादी कर ली है।'

'और बच्चे ?"

"एक लडकी थी। वह मर गई।'

मैं बडी देर तक सोच मे पडा रहा, फिर बोला—

"मगलू, मेरे जाने से क्या होगा। टी० बी० तो यहा आम बीमारी हो गई है। इसका बधा बधाया इलाज है—इजेक्शन लगवाओ, दवाई दो, अच्छी खुराक दो, ठीक हो जाएगी।'

वह बोला—'इजेक्शन लिए थे लेकिन गाव मे कोई सूई लगाने वाला नही मिलता। सरकारी डिस्पेंसरी का कपाउडर दो रुपये सूई लगाने के और दो रुपये घर आने के लेता है। दवाई दे रहा हू। खुराक जो है सो है। बाजार मे पचास पैसे का सेब मिलता है। घी दूध घर म है नही और न गाव मे कही मिलता है। फिर भी जितना होगा उसके लिए करूगा। बस तुम एक बार चलकर देख लो।"

सातो की बीमारी की खबर ने मुझे बुरी तरह झकझोर दिया था और मेरा मन उसे देखने के लिए, उसके करीब जाने के लिए बेचैन हो रहा था। किन्तु मुझे उसके बाप से, जो मेरे सामने खडा था नफरत हो रही थी। मैं उसे धक्के मारकर बाहर निकाल देना चाहता था, लेकिन

मैं इतना ही कह पाया, "मगलू, मैं तुम्हारे साथ नही जा सकता। मुझे बहुत से काम हैं। शनिवार को मुझे घर आना है, तब आऊगा।"

वह मेरे कदमो पर गिर पडा—"तब तक सातो नही बचेगी, भैया! उसे एक बार देख आओ। उसने बार-बार यही कहा है कि डॉक्टर साहब को ले आना। एकाध दिन और जिएगी। मरने से पहले तुम्हे देखना चाहती है।" कहते-कहते वह फफककर रो पडा।

मेरे दात गुस्से से भिच गए। फिर न जाने कैसे, उसे चीखकर निकल जाने को कहा और यह भी कह दिया कि वह अपनी बेटी का हत्यारा है।

वह चुपचाप अपने आसू पोछता हुआ बाहर निकल गया। गेट से बाहर निकलकर एक बार उसने मुडकर देखा। तब तक मेरे क्रोध का उफान उतर चुका था। मुझे अपने व्यवहार पर खेद हो रहा था। मैंने आवाज देकर उसे रोकना चाहा। किन्तु तब तक वह मुड गया था। मै दौडकर उसे रोकना चाहता था लेकिन मेरी टागें जकड गई थी मेरे पाव उठ नही रहे थे।

मैं फिर अपने कमरे मे आ बैठा और सारी घटना को एक सपना मानकर भुलाने की कोशिश करने लगा

बिनू मे नदी जितना पानी नही होता। फिर भी लोग उसे दरिया कहते हैं। मैंने एक दिन सातो से इसका कारण पूछा तो वह हस दी। बिनू के किनारे खतरनाक ढलान वाली तराई मे हरी घास का पूला बाधते हुए उसने कहा था—

'बरसात मे जब बाढ आती है तब देखा है तुमने बिनू को ? पानी का पहाड बहने लगता है। बडी बडी चट्टानें लुढकती टकराती हुई बहती हैं। उस वक्त बिनू की तरफ तुम नजर भरकर नही देख सकते।"

मैंने कहा था— लेकिन बरसात के बाद तो वही आठ दस नाले पानी रह जाता है।'

वह बोली थी—' पहाडी नदियों की जवानी इतनी ही होती है।"

मुझे लगा सातो मे भी बिनू की तरह जवानी की बाढ आ गई है। उसकी आखो मे असाधारण आकर्षण भर गया था। जब वह नजर भरकर देखती तो मेरे सारे जिस्म मे झुरझुरी आ जाती थी। कुछ साल पहले मैं

खेल खेल मे उसका हाथ पकड सकता था, उसके कानो मे धीरे से कुछ बात कह सकता था, उसकी पीठ पर मुक्का मार सकता था, उसे अपनी पीठ पर बिठा सकता था या उसे अपना घोडा बना सकता था। चद सालो मे ही उस न जाने क्या हो गया ? अब कभी उसका हाथ छूना तो शरीर काप उठता था और कनपटिया गम हो जाती थी। वह भी अपना हाथ इस तरह खीच लेती थी मानो जलती लकडी से छू गया हो।

मेरी नजरो म वह असाधारण थी। हालाकि जिस परिवार मे उसन ज म लिया था और जिन परिस्थितियो मे वह पली थी, उनम असाधारण की कल्पना आम तौर पर नही की जाती थी।

एक दिन मैंने परी कथाओ की एक पुस्तक मे परी का एक चित्र दिखाया और कहा कि उसकी शक्ल इस परी स मिलती है। इसपर वह नाराज हो गई, बोली—' मेरा मजाक उडाओगे तो मैं तुमस कभी न बोलूगी।"

मैंने कहा—"यह मजाक नही है। किसीसे भी पूछ लो। आज तक मैंने जितनी लडकिया देखी है, तुम उन सबसे सु दर हो।"

वह उठकर चली गई। फिर सचमुच मुझसे कई दिन नही बोली।

एक दिन पता चला, उसकी बिरादरी म सगाई हो रही है। मुझे यह खबर अच्छी नही लगी। मैंने कभी उससे शादी की बात नही की थी और न ही उसने कभी की थी। यह बात शायद हमारे विचार मे भी नही आई थी। इससे पहले मुझे यह एहसास नही था कि साता मेरे जीवन मे समा गई है। बचपन मे हमने जगल म कितने ही दिन ढगर चराते बिताए थे। सवण असवण का भेद हमारे बीच कभी नही रहा। गाव म मेरी कई लडको से मित्रता थी। लडकियो से भी अच्छी बोलचाल थी। लेकिन सातो के साथ बैठने या बातें करने मे मुझे जो प्रसन्नता होती थी वह अन्य के साथ नही होती थी। आम के मौसम मे अगर मैं आम बीनता तो सातो के लिए अच्छे अच्छे आम अलग रख लेता था। सातो भी अपने खेत से ककडिया या भुट्टे चुराकर मुझे द जाती थी।

सातो की मगनी की बात ने मेरे भीतर उथल-पुथल मचा दी। उस शाम वह बावडी से पानी लाने गई तो मैं भी वहा पहुच गया। एकात

पाकर मैंने पूछा—"सातो, तुम्हारी मगनी हो गई ?"

उसन लजाकर सिर झुका लिया। मैंने फिर पूछा तो वह बोली—"य बातें क्या लडकियो से पूछी जाती हैं ?"

मैं कुछ देर चुप रहा, फिर साहस बटोरकर बोला—"अगर हम यहा मे भागकर शहर मे शादी कर लें तो ?"

उसन मुस्कराकर पूछा—"क्या तुम्हारी बिरादरी मे तुम्ह कोई लडकी नही देगा ? ' मैंने कहा—"मुझे कोई लडकी नही चाहिए। मैं तुमसे शादी करना चाहता हू।"

"यह बात दोबारा मत कहना।" वह बोली—' मेरी मगनी हो गई है और अगले महीने ब्याह भी हो जाएगा। तुम्हारी बात किसी ने सुन ली तो मैं भी बदनाम हूगी और तुम भी। सारा गाव तुम्हारी हसी उडाएगा।"

' तो तुम्ह इस रिश्ते से खुशी है ?" मैंन पूछा।

"क्या नही।" उसने गम्भीरता से उत्तर दिया—"शादी तो कही न कही होनी ही है। सुना है वह दिल्ली मे ड्राइवर है। मैं शहर म जाकर रहूगी। कीचड पानी के काम से बचूगी "

मुझे उसकी बात अच्छी नही लगी—"इसका मतलब, तुमन मुझे कभी प्यार नही किया। मैं ही मूख था। '

उसने तडपकर मेरा हाथ पकड लिया—"यह तुमसे किसने कहा ? मैंने तुम्ह कितना प्यार किया है, इसे तुम क्या जानते हो ?"

मैंने कहा—"प्यार किया होता तो तुम मेरे साथ शादी करने के लिए तैयार हो जाती।"

वह नाक सिकोडकर बोली—' तुम निरे बुद्धू हो। शादी और बात है, प्यार और बात है। शादी तो बिरादरी मे ही होती है, प्यार किसी से भी कर सकते हैं। मैं तुमसे शादी नही कर सकनी, लेकिन प्यार करने से मुझे कौन रोक सकता है ? तुम चाहो तो तुम भी नही रोक सकत।"

मैं निरुत्तर हो गया। उसका निश्चय अटल था। उसका तक अकाटय था। उसके विचार स्पष्ट और भावना निश्छल थी। कही दुराव या दिखावा नही था।

बाद मे पता चला कि जिस ग्रादमी से सातो की सगाई हुई है
पहली पत्नी टी० बी० से मर चुकी थी। उसने सातो के बाप मग
डटकर शराब पिलाई थी और पाच सौ रुपये नकद दिए थे। बिरा
कई लोगो ने मगलू को समझाया था कि वहा सातो की शादी मत
लेकिन उसने शराब और पैसे के लालच मे हामी भर दी थी। सातो
भी कोई विरोध नहीं किया था।

लगता है विरोध नाम की चीज न उसके जीवन मे कभी प्रवेश
किया। उसके अनुसार दुनिया मे जो कुछ होता है, वह होना ही हो
इसलिए होता है। उसे कोई रोक नहीं सकता, कोई बदल नहीं स
इसलिए विरोध के लिए गुजाइश ही नहीं होती।

शादी के बाद वह उसी घर मे रही, जिसमे उसके पति की प
पत्नी मरी थी। ग्रोढन बिछान के वही बदबूदार और कीटाणु भरे
इस्तेमाल करते वक्त भी शायद उसके मन मे विरोध की बात नहीं उ
जब उसके शराबी पति ने घर आना और खर्च के लिए पैसा भेजना
कर दिया तब भी उसने सब कुछ चुपचाप सह लिया, बिना किसी वि
के, बिना किसी शिकायत के। वह इस धरती की, जिसपर उसने
लिया था प्रतिमूर्ति थी जो मनुष्य के तमाम पापो, ग्रभिशापो को चुप
ढोती आ रही है।

शायद वह सामने खडी मौत को भी मुस्कराकर देख रही होग
मुझे विश्वास है वह उसका विरोध नहीं करेगी। उसने जीवन को प
किया और मौत का भी प्यार से देख रही होगी।

सुनीला को सामने देखकर मेरे विचारो का सिलसिला टूटा। वह
का कुछ सामान खरीदने के लिए मेरे साथ बाजार जाना चाहती थी। लि
मैं बाजार जाने के मूड मे नहीं था, मैं अपने गाव जाना चाहता था—सा
को देखने और हो सके तो उसे अपने साथ ले आने। अस्पताल मे रोगि
के रहने की व्यवस्था नहीं थी लेकिन हमारे मकान मे नौकर का कम
खाली था। सातो वहा ट्रेंड नर्स सुनीला की निगरानी में बहुत जल
स्वस्थ हो सकती थी। लेकिन सुनीला को सब बातें साफ-साफ बता
होगी। क्या वह इस अवाछित भार को अविरोध स्वीकार करगी ?

लिखित

'पुष्पा, ओ पुष्पा ! कब तक सोती रहेगी ? स्कूल नही जाना है ?" मा तीसरी बार आकर उसे जगा गई । पुष्पा सब कुछ सुन रही थी लेकिन वह चादर ओढे और आखें बद किए पडी रही ।

'सुबह सुबह कितनी मीठी नीद आती है। लेकिन यह मा है कि डडा लेकर पीछे ही पड जाती है।" उसने सोचा, "आखिर ऐसी भी क्या आफत है। स्कूल ही तो जाना है। तैयार होने मे देर ही कितनी लगती है।"

वह एक झपकी और लेने के मूड मे थी। तभी कमलेश ने उसकी चादर खीचकर फेंक दी और बोला—"तू उठेगी या कहू पकौडी ?"

उसकी बात पुष्पा को ततैया के डक की तरह चुभ गई। तडपकर उठी और दो घूसे कमलेश की पीठ पर जमा दिए।

'ले कुत्ते ! अब कहेगा ?"

कमलेश हस दिया, बोला—

प से पुष्पा और प से पकौडी । मैं क्या करू ? तुम भी तो मुझे कुत्ता कहती हो।"

"कहूगी, जरूर कहूगी। काला-कलूटा, कजूस, कुत्ता—सब कुछ कहूगी।"

'लेकिन मैं तो सिर्फ पकौडी कहूगा।"

उसने मेज पर पडी मोटी-सी पुस्तक उठाई और उसके सिर पर दे मारी।

मैं कहती हू, मुझे मत छेड। नहीं तो मैं तुम्हे जान से मार डालूगी।'

कमलेश बोला, 'एक झापड दूगा तो दिन मे तारे नजर आएगे। बडी

ग्राई जान से मारने वाली।"

'तुमने मुझे पकौडी क्यो कहा ?"

"तुम जल्दी क्यो नही उठती ? हर रोज तुम्हारा यही हाल है।"

"नही उठती। मेरी मर्जी। तुम क्यो चिढते हो ?"

तभी पुष्पा की बडी बहन सुपमा कमरे मे ग्राई। "महारानी जी, मैं तुम्हारे लिए स्कूल मे हर रोज झाड नही सुन सकती। घटी लगने म पद्रह मिनट रह गए हैं। कब तू नहाएगी ग्रौर कब नाश्ता करेगी ? मैं तुम्हारे लिए नही रुक सकती।"

पुष्पा पहले ही गुस्से मे भरी हुई थी। सुपमा की बात सुनकर वह बरस पडी—'तुम्हें कौन कहता है रुकने के लिए ? चली जा। मैं ग्रकेली नही ग्रा सकती ?'

'मैं तेरी चालाकी खूब समझती हू।" सुपमा बोली, "सोचती होगी, मैं चली जाऊगी तो तू सिरदद का बहाना करके छुट्टी ले लेगी।"

'मेरी मर्जी होगी तो स्कूल जाऊगी। नही मर्जी होगी तो नही जाऊगी। तुम्हें क्या ? तुम क्यो चिढती हो ?"

सुपमा भी ग्रब सचमुच चिढ गई बोली—

'ग्रच्छा ग्रच्छा चपर चपर मत कर, नही तो दो चाटे मारूगी।'

"मार तो सही। चखाऊ तुम्हें मजा ?"

"जल्दी से तैयार हो जा। दस मिनट रह गए हैं।"

क्रोध का घूट पीकर वह बाथरूम मे घुस गई। पाच छ मिनट बाद नहाकर निकली तो उसकी ग्राखें लाल थी। कमलेश ने चुटकी ली—'बाथरूम मे इतनी देर रोती रही क्या ?"

नहाते समय उसकी ग्राखो म साबुन लगा था। उसीसे ग्राखें लाल हुई थीं। लेकिन कमलेश की बात सुनकर उसे लगा कि वह सचमुच रो देगी।

उसने गीला तौलिया कमलेश के मुह पर फेंका, पीठ पर पूरे जोर के साथ एक घूसा जमाया ग्रौर फिर झटपट दूसरे कमरे म चली गई।

बस्ते को उलटकर उसने सारी पुस्तकें-कापिया फश पर बिखेर दी। एक छोटे से कागज पर लिखा टाइम टेबल नही मिला, तो दात पीसकर वह पुस्तको को पटकने लगी।

"मा, मेरा टाइम, टेबल कहा है ?" उसने चीखकर पूछा।

रसोईघर से मा ने कहा—

"मुझे क्या पता, तुम्ही न रखा होगा ?"

उसने एक-एक करके सभी पुस्तकें और कापिया झाडकर रख डाली। टाइम टेबल नही मिला तो उसकी आखो मे बरबस आसू उमड आए। किसी तरह उसने बस्ता तैयार किया। अब कघी लेकर बाल सवारने लगी। बाल छुडाने मे काफी कष्ट हो रहा था। जल्दबाजी मे कघी बालो को उखाडे जा रही थी। दिल का गुस्सा कघी पर बरसा। जब दो-तीन जोर के झटको के बाद भी बाल नही सुलझे तो कघी को फर्श पर जोर से दे मारा और फफककर रो पडी।

मा ने रसोईघर से कहा, "सुषमा, तू कर दे न इसके बालो मे कघी।"

सुषमा बोली, "सबको अपना काम स्वय करना चाहिए।"

पुप्पा जानती थी कि सुषमा यही बात कहेगी। पुस्तक के पाठ का शीर्षक उसने इसीलिए याद कर रखा था।

उसके दिल का उफान बरस पडा। घुटन आसुओ मे बहने लगी। सुषमा ने कघी उठाई और उसके बाल सवारने लगी।

"रोज तुम्हारा यही हाल है। सात बजे तक बिस्तर पर पडी रहती हो। फिर बात बात पर रोना शुरू कर देती हो।" सुषमा की इस बात ने उसे फिर भडका दिया, बोली—"कुत्ती, जानकर बालो को जोर से खीच रही है। मैं नही कराऊगी तुम से कघी। छोड मुझे।" और वह फिर रो पडी।

मा रसोईघर का काम छोडकर आई। रोते खीझते उसने कघी कराई। स्कूल की ड्रेस पर ठीक से प्रेस न होने के कारण मा पर बरस पडी। बूट जुराब ढूढने म कठिनाई हुई तो फिर कमलेश पर दोष मढ दिया कि कुत्ता हर रोज उसकी चीजें छिपा देता है। एक क्षण के लिए वह आसुओ को सुखाती थी लेकिन दूसरे ही क्षण आखें फिर भर भर आती थी।

जैसे-तैसे स्कूल की तैयारी हुई तो मा ने नाश्ते के लिए आवाज लगाई। वह झल्लाकर बोली— 'मुझे नही चाहिए तुम्हारा नाश्ता।"

आज वह खुद परेशान था। स्कूल लगने में सिर्फ आधा घंटा रह गया था। आज साइंस प्रैक्टिकल की परीक्षा थी। चीर फाड़ का डिब्बा न मिलने पर उसके सारे अंक मारे जाने की संभावना थी।

मा ने भी सुषमा और पुष्पा से डाटकर पूछा लेकिन दोनों ने इस सादगी से उत्तर दिया मानो उन्होंने डिब्बे को कभी छूकर भी नहीं देखा।

खोज और झल्लाहट में उसने रैक की सारी किताबें एक एक करके फर्श पर पटकनी शुरू कीं। अलमारी की चीजें उलट पुलट दीं। घुटनों के बल फर्श पर लेटकर सोफे-कुर्सियों के नीचे का फर्श देख डाला। खिलौनों का ताक, रद्दी अखबारों का ढेर टूटी फूटी चीजों की पेटी सब जगह डिब्बे की खोज की, लेकिन डिब्बा नहीं मिला। हारकर वह बैठ गया। दो बजने में सिर्फ दस मिनट रह गए। अब कुछ नहीं हो सकता। वह परीक्षा नहीं दे सकता। वह फेल हो जाएगा।

और इस विचार के आते ही उसकी आंखों में आंसू निकल पड़े।

पुष्पा ने उसकी आंखों में आंसू देखे तो मन ही मन खुश हुई। फिर कुछ सोचकर बोली, "मैं तुम्हारे लिए डिब्बे का इंतज़ाम कर दूं, तो मुझे क्या दोगे?"

"कहां से कर देगी?"

"मैं अपनी सहेली के भाई का डिब्बा मांग लाती हूं। उसका प्रैक्टिकल सुबह हो चुका है।"

"तो भागकर ले आ।"

'लेकिन बदले में मुझे दोगे क्या?"

'दस पैसे।

'धत्त् दस पैसे किस काम के? उसकी तो एक टाफी भी नहीं आती।'

तो फिर क्या दूं?'

"एक वचन दो।

"क्या?"

"तुम वचन दो।'

"अच्छा दिया।"

"लिखकर दो कि फिर कभी तुमने मुझे पीटा या उलूल-जुलूल नाम से पुकारा तो तुम महीने का सारा जेबखर्च मुझे भेंट करोगे।"

कमलेश के आगे कोई चारा नहीं था। उसने लिखकर दे दिया। पुष्पा ने पर्ची को मुट्ठी में लेकर कहा, "यह पर्ची पिताजी के पास जमा रहेगी।"

इसके बाद वह दौड़कर बाहर गई। दो मिनट में ही वह चीर फाड़ का डिब्बा लेकर लौट आई। कमलेश के हाथ डिब्बा थमाते हुए वह बोली—"लीजिए, यह डिब्बा आप ही का है।"

कमलेश दांत पीसकर उसकी ओर लपका लेकिन उसने हाथ की पर्ची दिखाई और मुस्कराकर बोली, "वचन देकर मुकरना भले आदमियों का काम नहीं है।"

टोपियो की गडबडी

बात लगभग पच्चीस छब्बीस वष पुरानी है। हमारा देग आज़ाद हुआ ही था। जैसा कि सब जानते हैं आज़ादी के साथ साथ देश के हिदुस्तान और पाकिस्तान नाम के दो टुकडे हुए थे और एक टुकडे के लोग लाखो की सख्या मे दूसरे टुकडे मे जाकर बेघरबार बेरोजगार होकर भटक रह थे।

ऐसे ही भटके हुए लोगा म एक आदमी दिल्ली की गलिया म टोपिया बेचकर अपनी जीविका कमाता था। उसकी गठरी म तरह-तरह की टोपिया रहती थी। नता, देशभक्त, व्यापारी, डॉक्टर, जज, वकील—सब प्रकार के लोगो के लिए अलग अलग किस्म की टोपिया वह बेचा करता था। वैस उन दिना नेताओ और देशभक्तो की टोपिया की सबस ज्यादा बिक्री होती थी लेकिन शोहदो गुण्डो और लफगो की टोपिया की बिक्री भी कम नही थी।

एक दिन उस बेचारे के साथ ऐसी घटना घटी जिसे अजीब तो नही कहा जा सकता (क्योकि पहले भी टोपी वाले के साथ ऐसी ही घटना घटी थी) लेकिन उसे मजेदार घटना तो कहा ही जा सकता है। उन दिनो की दिल्ली आजकल की दिल्ली की तरह बजर नही थी क्योकि उस समय दिल्ली की सडका पर अग्रेज बहुत स पेड छोड गए थे। टोपी वाला थककर एक पड के नीचे सोया था कि कई बन्दर आ धमके। ब दर दिल्ली मे उस समय भी बहुत थे और अब भी कम नही हैं। सच बात तो यह है कि दिल्ली ने यदि अपनी किसी विशेषता की बडी मुस्तदी से रक्षा की है तो वह विशेषता उसकी बन्दर बहुलता ही है।

जब बन्दरो ने दखा कि टोपिया बेचन वाला एक सुन्दर टोपी पहने

पेड के नीचे लटा है तो वही हुआ जो बहुत पुरानी कहानी मे हम सबने पढा है। यानि बन्दर टोपियो की गठरी पर टूट पडे और एक एक दो दो टोपिया उठाकर पड पर जा बैठे। आते जाते जिन लोगो ने यह तमाशा देखा उन्हे बडा मजा आया। किसी बन्दर न जज की टोपी पहन रखी थी, कोई देशभक्त की टोपी को दातो स नोच रहा था। किसी न बनिये की टोपी के ऊपर अध्यापक की टोपी लगा रखी थी। कोई वकील की टोपी पहनकर दात निपोर रहा था और कोई डॉक्टर की टोपी पहनकर आन-जाने वालों को घुडकी द रहा था।

टोपी वाले की नीद टूटी तो वह अपनी गठरी खाली देखकर बहुत चकराया। जब उसकी नजर पेड पर गई तो चेहरे पर चमक आ गई। पुरानी कहानी को याद करके वह खुश हुआ कि टोपिया वापस लेने का बहुत आसान नुस्खा उसे मिल गया। लेकिन जब उसने अपने सिर की टोपी उतारकर जमीन पर पटकी तो वैसा नही हुआ जैसा पुरानी कहानी मे कहा गया था।

हुआ यह कि बन्दर भाग खडे हुए। टोपियो के साथ वे एक पड स दूसरे पड पर, दूसरे से तीसरे पर, फिर वहा से एक छत पर फिर दूसरी पर और तीसरी पर इसी तरह दिल्ली की गलिया मे भागन लगे। टोपी वाला बेचारा परेशान। कभी कहानी लिखने वालो को कोसता, कभी पास-पास मकान बनाने वाले इजीनियरो को गाली देता। वह बन्दरो के पीछे पीछे गलियो मे भागने लगा और बन्दरा को देखकर सिर की टोपी जमीन पर पटकने का अभिनय करने लगा। लेकिन बन्दरो ने उसके इशारे पर कोई ध्यान नही दिया। फिर एक बूढे समझदार बन्दर को कहानी की याद आई और उसने टोपी वाले पर तरस खाकर अपने सिर पर रखी देशभक्त की टोपी नीचे गली मे फेंक दी।

गली मे एक शोहदा शराब पिए, गाली गलौच करता चला जा रहा था। टोपी उसके सिर पर आ गिरी। आस पास के लोगो ने यह दृश्य देखा तो खूब जोर का कहकहा लगाया। इस पर बन्दरो ने न जाने क्या सोचा। उन्हे लगा कि टोपी फेंकने के लिए सब लोग बूढे बन्दर की तारीफ कर रहे है। उन्होने लाल किले के कगूरो पर चढकर कवि सम्मेलन म

देखा था कि ढेर सारे लोगो का "ही ही" करके हसना या चिल्लाना किसीकी तारीफ करना होता है।

बस, सारे बन्दर अपने अपने सिरा की टोपिया नीचे फेंकते हुए शहर म भागने लगे। बन्दरो द्वारा फेंकी गई टोपिया आने-जाने वाले लोगो के सिरा पर पडने लगी। वकील की टोपी बनिये के सिर पर, सिपाही की टोपी कमाई के सिर पर, प्रोफसर की टोपी हलवाई के सिर पर, सेवक की टोपी जेबकतरे के सिर पर, आम आदमी की टोपी बकरे के सिर पर। लेखक की टोपी चाट-पकौडी वाले को मिली। अध्यापक की टोपी भडभूजे के सिर पर गिरी। साराश यह है कि सारे शहर म आदमियो और टोपियों की गडबडी हो गई।

गडबडी आज भी बनी हुई है अत कहानी यही समाप्त की जाती है।

□□□

मस्तराम कपूर

जन्म—22 दिसम्बर 1926 (हिमाचल प्रदेश)। सन 1951 से लेखन और पत्रकारिता के साथ संबद्ध। कहानी, उपन्यास, नाटक और बाल साहित्य लेखन का प्रमुख क्षेत्र। बच्चे और हम और 'दिल्ली' मासिक पत्रिकाओं का सम्पादन।

अन्य प्रकाशित रचनाए

उपन्यास विपथगामी, एक अटूट सिलसिला, तीसरी आंख का द्वन्द, नाव का डाक्टर।

कहानी संग्रह एक अन्द औरत।

बाल उपन्यास नीरू और हीरू, भूतनाथ, सपेरे की लडकी।

बाल कहानी-संग्रह निर्भयता का वरदान, दंड का पुरस्कार, आजा होजा सहेली चोर की तलाश, ऐंगा बगा।

बाल नाटक बच्चों के नाटक, बच्चों के एकांकी, पांच बाल नाटक, स्पर्धा।